अध्याय-1

संस्कृति की परिभाषा और इसके विभिन्न पहलू

1.0 उद्देश्य

इस अध्याय से हमें निम्न जानकारी प्राप्त होगी-

- संस्कृति की परिभाषा एवं इसके अध्ययन के विभिन्न परिप्रेक्ष्य और दृष्टिकोण का वर्गीकरण।
- भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं में बहुलता की व्याख्या
- संस्कृति के अनेक रूप की सूची
- चुने हुए उदाहरणों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के सामाजिक तत्त्वों का विश्लेषण

1.1 संस्कृति के अध्ययन का अर्थ, परिप्रेक्ष्य और उसके प्रति दृष्टिकोण

1.1.1 भूमिका

जो परिवर्तन हमें मीडिया क्रांति, उत्तर-औद्योगिक तकनीकों एवं संसारव्यापी संचार जाल के जरिये दिखाई पड़ रहा है उसने एकरूपी संस्कृति की उत्पत्ति के प्रति आशंकाओं को जन्म दिया है। कई विद्वान आने वाले दशकों में 'सभ्यताओं के टकराव' की चर्चा कर रहे हैं। ऐसा माना जा रहा है कि सांस्कृतिक वर्चस्व स्थापित करने की प्रवृत्ति ऐसे टकराव को उत्पन्न करेगी जो 19वीं शताब्दी के औपनिवेशिक शासन के प्रति हुए विरोध से भी अधिक होगी। ऐसी स्थिति में प्रश्न यह है कि इतनी विविध संस्कृतियों को आज के तेजी से हो रहे वैश्वीकरण और मानवीय जीवन में हो रहे परिवर्तन के परिवेश में कैसे कायम और अधिवृद्ध किया जा सकता है? आज लोग भारत की ओर देख रहे हैं और यह आशा कर रहे हैं कि यह देश जिसकी सभ्यता 5000 वर्ष पुरानी है ऐसे प्रश्नों के उत्तर प्रदान करेगा जो लोगों को सामाजिक समन्वय की ओर अग्रसर कर सके तथा साथ ही जहाँ सांस्कृतिक विविधता को सम्मान भी दिया जाय।

1.1.2 अर्थ

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से संस्कृति और सभ्यता जैसे शब्द पश्चिम यूरोप में अपने आदर्शात्मक अर्थ में प्रयुक्त होने प्रारंभ हुए। सामान्यतया यह स्वीकार किया जाता है कि संस्कृति स्वभाव का भाग नहीं बल्कि यह अधिग्रहीत जैसा कुछ है। यह कोई व्यक्तिगत अधिग्रहण नहीं बल्कि परंपरा के भाग के रूप में अतीत काल से हस्तांतरित हुआ है। इस अर्थ में संस्कृति अनुभूति की परंपरा के रूप में परिभाषित होती है। जीवन मूल्य आधारभूत मानवीय गतिविधियाँ हैं जो मूल्यवत्ता के विषय हैं। मूल्यवत्ता से हमारा अभिप्राय इच्छा, चयन और अनुमोदन है। मानव मस्तिष्क के स्तर पर इच्छा स्वचेतनात्मक और आलोचनात्मक हो जाती है और इसकी विषयवस्तु और इच्छा की प्रक्रिया प्रतीकात्मक हो जाती है। मूल्यवान अनुभवों की अभिव्यक्ति एवं संप्रेषण आदर्शात्मक प्रक्रिया को सामाजिक-ऐतिहासिक वास्तविकता प्रदान करते हैं और एक सांस्कृतिक विश्व की रचना होती है।

इतिहासकार प्राय: संस्कृति को एक ऐसे तत्त्व के रूप में परिभाषित करते हैं जो किसी क्षेत्र और काल के समाज की थाती है। इस प्रकार इस संदर्भ में संस्कृति एक सामाजिक परंपरा के रूप में सुनिश्चित समाज की उपलब्धि और गठन बन जाती है यदि संस्कृति उपलब्धियों के संदर्भ में सोची जाय तो उपलब्धियों की परिभाषा भी उतनी ही आवश्यक हो जाती है जितनी संस्कृति की। समाज की परिभाषा भी

इसी प्रकार कठिन है। यदि हम परम संस्थान के रूप में अथवा संस्थाओं के संकुल के रूप में समाज को परिभाषित करें तो वह क्या है जो किसी संस्थान का केन्द्र है? संस्थान विचारों और आदतों पर केन्द्रित होते हैं। किसी भी संस्कृति के लिए विचार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हैं और इसका आंकलन इसी से किया जा सकता है कि एक विचार एक रवैये या अभिवृत्ति को प्रेरित करता है। यह किसी संस्थान के लिए निर्णायक है। ये विचार ही हैं जिसके प्रकाश में किसी संस्थान की समीक्षा और किसी समाज की चेतना के आंतरिक मूल्यों का अनुमोदन किया जाता है। इसी के मिले-जुले रूप को संस्कृति कहा जाता है।

यदि संस्कृति उद्योगों, तकनीकों अथवा सामाजिक संस्थाओं का संकुलन नहीं है तो क्या यह इन सबके साथ-साथ अन्य तथ्यों को सम्मिलित करने वाला रूप अथवा विन्यास कहा जा सकता है? संस्कृति की एक ऐसे रूप में धारणा जिसमें सामाजिक अनुभवों और विचारों का समावेश हो को कुछ व्याख्या की आवश्यकता है। विद्वान व्हाइटहेड (Whitehead) विचारों के रूप के समुच्चय के बारे में बात करते हैं और ओस्वॉल्ड स्पेन्गलर (Oswald Spengler) सर्वसम्मिलित रूप की अवधारणा का सुझाव देते हैं। बौद्धिक गतिविधि के विशिष्ट प्रकारों के रूपों के पद्धतिकरण की संभावना संस्कृति के विकास के आखिरी चरण में परिकल्पित की गई और इस क्षेत्र में ऐसे प्रयास रचनात्मक गतिविधि को ठेठ प्रतीकात्मक और पुनरुक्तिपरक रूप में देखते प्रतीत होते हैं। किसी काल की या किसी समाज की विभिन्न प्रकार की गतिविधियों की जागरूकता मस्तिष्क में व्यवस्था और सूत्रबद्धता के बढ़ते हुए भाव उत्पन्न करती है। क्या इस प्रकार की एकता के भाव को किसी रूप में वर्णित किया जा सकता है? क्या संस्कृति इस तरह की किसी एकता का गठन करती है? क्या यह इस प्रकार की संबंधशीलता रखती है? किसी संस्कृति में जो कुछ वस्तुतः एकता का भाव उत्पन्न करता है, वह विषय से संबंध रखता है, वस्तु से नहीं। यह केवल सांस्कृतिक जागरूकता की एकता है।

1.1.3 प्रयोग एवं परिभाषा

अंग्रेजी भाषा के प्रारंभिक प्रयोगों में 'कल्चर' (Culture) शब्द फसलों और पशुओं की उत्पत्ति के कार्य 'कल्टीवेशन' (Cultivation)के साथ और धार्मिक उपासना के कार्य (Cult) कल्ट से संबद्ध था। सोहलवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक विशिष्ट शब्द 'कल्चर' शिक्षण के माध्यम से मानव मस्तिष्क एवं व्यक्तिगत आचार की बेहतरी के लिए प्रयुक्त किया जाता था। इस अवधि के दौरान यह विशब्द (विशिष्ट शब्द) संपूर्ण ईकाई के रूप में समाज की बेहतरी का अर्थ देने लगा और सभ्यता (बर्बरता के विलोम संस्कृति) का पर्यायवाची बन गया। रोमांसवाद के उदय के साथ यह विशब्द भौतिक और आधारभूत संरचना संबंधी परिवर्तन की अपेक्षा आध्यात्मिक विकास का द्योतक बन गया। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक सांस्कृतिक रूप-रचनाएँ और दैनिक जीवन के आयाम इससे जुड़ गए।

इसी काल में 'लोक संस्कृति' (Folk Culture) एवं राष्ट्रीय संस्कृति (National Culture) से संबंधित विचार उभरे। जर्मन अवधारणा में 'KULTUR' के अंतर्गत संस्कृति (Culture) को सभ्यता (Civilization) तथा व्यक्तिगत अथवा सामूहिक नैतिक प्रगति से जोड़ कर देखा गया। संस्कृति का एक अन्य प्रयोग बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मानवशास्त्रियों ने किया जो आज तक इस विधा का केन्द्रीय तत्त्व बना हुआ है। इस विधा के अनुसार संस्कृति को सर्वत्र पाया जाना चाहिए न कि केवल पश्चिमी 'सभ्यता' की उच्च कलाओं में। अपनी रचना 'कीवर्डस' (Keywords) में रेमंड विलियम्स (Raymond Williams) ऐतिहासिक बदलाव को तीन प्रचलित प्रयोगों में समाहित करते हैं।

1. किसी व्यक्ति-समूह अथवा समाज के बौद्धिक, आध्यात्मिक और सौंदर्यपरक विकास की श्रेणी को दर्शाना।

2. बौद्धिक एवं कलात्मक गतिविधियों एवं उनकी प्रस्तुतियों (चलचित्र, कला, रंगमंच) को प्रदर्शित करना। इस प्रयोग में संस्कृति साधारणत: 'कला' के समान है।
3. किन्हीं लोगों, समूह अथवा समाज की जीवनशैली, गतिविधियों, मान्यताओं एवं रीति-रिवाजों का द्योतक।

मानवशास्त्रियों क्रोएबर (Kroeber) और क्लक्हॉन्ह (Kluckhonh) ने संस्कृति (Culture) के अर्थ के अपने अध्ययन में संस्कृति की अनेक विशिष्ट परिभाषाओं का संकलन किया है जिनमें निम्नलिखित छह प्रमुख हैं-

1) वर्णनात्मक परिभाषाएँ जो संस्कृति को सामाजिक जीवन की समिष्ट का सृजन करने वाली समावेशी संपूर्णता के रूप में देखती है और उन विभिन्न क्षेत्रों को सूचीबद्ध करती हैं जो संस्कृति का निर्माण करते हैं। उदाहरण के लिए टायलर (Tylor)।
2) ऐतिहासिक परिभाषाएँ जो संस्कृति को धरोहर के रूप में देखती हैं जिसे पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांरित किया गया है। उदाहरणार्थ- पार्क एवं बर्गेस (Park and Burgess)।
3) प्रतिमानात्मक परिभाषाएँ जिसमें एक रूप संस्कृति को जीवन के मार्ग अथवा नियम के रूप में सुझाता है जैसे विस्सलर (Wissler) और एक अन्य रूप आचरण के संदर्भों के बगरै मूल्यों की भूमिका पर जोर देता है। उदाहरणार्थ: डब्ल्यू० आई० थॉमस (W.I. Thomas)।
4) मनोवैज्ञानिक परिभाषाएँ जो लोगों को संवाद करने, सीखने अथवा भौतिक एवं भावनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति की अनुमति देने वाली समस्या-समाधान युक्ति के रूप में संस्कृति की भूमिका पर जोर देती हैं।
5) संरचनात्मक परिभाषाएँ जो संस्कृति के विविध पहलुओं के संगठित अंतर्संबंधों का संकेत करती हैं।
6) अनुवांशिक परिभाषाएँ संस्कृति को इस प्रकार परिभाषित करती हैं कि अंतर्पीढ़ीगत हस्तांतरण के उत्पाद के रूप में संस्कृतियाँ कैसे अस्तित्त्व में आईं।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में संस्कृति की समझ जटिल हो गई। इस विशब्द के सारभूत प्रयोगों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है-

1. संस्कृति को भौतिक, तकनीकी एवं सामाजिक संरचनात्मक वास्तविकताओं से अधिक गूढ़ एवं कुछ विशिष्टतायुक्त वस्तु के रूप में समझे जाने की आवश्यकता है।
2. संस्कृति को विश्वासों, मूल्यों, प्रतीकों, चिन्हों और भाषाओं के विन्यस्त क्षेत्र के रूप में समझा जाना चाहिए।
3. संस्कृति की सुनिश्चित स्वायत्तता को स्वीकार किया जाना चाहिए और संस्कृति को आधारभूत आर्थिक शक्तियों, सत्ता के वितरण अथवा सामाजिक संरचनागत आवश्यकताओं के विशुद्ध प्रतिबिंब की तरह नहीं देखा जाना चाहिए।
4. संस्कृति का अध्ययन कलाओं तक ही सीमित नहीं होना चाहिए बल्कि उसे सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं और स्तरों तक व्यापक समझा जाना चाहिए।

1.1.4 पाश्चात्य परंपरा

वह मौलिक अनुभव जिनसे मानव जाति की शुरूआत हुई में तीन प्रमुख तत्त्व-भौतिक, जैविक और तार्किक समाहित हैं। अनुभव के ये तीन तत्त्व सांस्कृतिक परम्परा के लिए मूलभूत अनुभव का निरंतर गठन करते हैं। यह मृत्यु का भाव है जो एक ऐसे गहन वातायन की तरह उभरता है जिसके पार कोई

इशारों से बुलाता है- यह एक ऐसी परछाई है जो मानव के जेहन में घूमती रहती है। दूसरी तरफ जैविकता का अनुभव जीवन के भाव से युक्त है। जीवन तथा मृत्यु के भाव के मध्य स्थित विरोधाभास में तार्किक संदर्भों के अंतर्गत सामंजस्य स्थापित किया गया। पश्चिमी देशों में जीवन तथा मृत्यु के सामंजस्य के प्रथम तार्किक सिद्धांत में ईश्वर व मानव के द्विभाजन को उभारा गया। इनके मध्य शक्ति एवं मानव के पारिभाषिक अर्थों के रूप में विशिष्टता है। ईश्वर एक अज्ञात सत्व है जिसे सत्ता और इच्छाशक्ति प्राप्त है। वहीं दूसरी ओर मानव भी एक सत्व है जो इच्छाशक्ति में सम्पन्न है परन्तु जिसकी सत्ता सीमित है। साथ ही मानव सर्वदा सफल नहीं होता। मानव व ईश्वर के मध्य का यह मूलभूत विरोधाभास पाश्चात्य धर्मों के संपूर्ण इतिहास में निरंतर मौजूद रहा है।

मानव एवं ईश्वर का संबंध कई संभावित अभिव्यक्तियों में प्रकट होता है जिसमें विद्रोही तत्त्व भी शामिल हैं। मानव का इर्श्वर के प्रति विद्रोह या तो इर्श्वरीय तत्त्व को नकारने अथवा उसके बराबर पहुंचने के मार्ग की इच्छा के रूप में व्यक्त होता है। मानव किस प्रकार ईश्वर के समकक्ष है? जादू से अथवा विज्ञान से। पश्चिमी देशों के लोगों के लिए प्रकृति एक रहस्य और इसे जानने और इस पर स्वामित्व स्थापित करने की चुनौती रही है। चूंकि ईश्वर सृष्टिकर्ता एवं स्वामी के रूप में देखे जाते हैं अत: ईश्वर और प्रकृति एक अकेली वास्तविकता के सृष्टिकर्ता और सृष्टि संबंधित पहलू बन गए। तर्कवादी पाश्चात्य परंपरा आत्मा को चित्त और चित्त को रूप के साथ देखते हैं। यहाँ तक कि पदार्थ और व्यवहार उन मनोभावों के विन्यास हैं जिनका ब्रह्म में प्रतिबिंबित रूप है। मानव-ईश्वर द्वैतवाद जो परंपरा का केंद्रीय तत्त्व है पदार्थ-प्राण द्वैतवाद की ओर ले जाने की प्रवृत्ति रखता है। चाहे यह अरस्तूवादी अथवा मध्ययुगीन अथवा आधुनिक दर्शन हो, ये सभी दर्शन उन्हीं प्रवृत्तियों के विकसित रूप में जाने जाते हैं जिसमें यह विश्लेषण किया जाता है जो अग्रिम वाक्य में है- "प्रारंभ में केवल शब्द था, शब्द इर्श्वर से युक्त था, शब्द ईश्वर था।"

अभ्यास 1

(अ) निम्न के लिए 'सही' या 'गलत' बताईये:

(i) संस्कृति प्रकृति का भाग है जिसे ग्रहण नहीं किया जा सकता।

(ii) सांस्कृतिक विश्व का निर्माण मानव एक ऐतिहासिक परंपरा के रूप में आत्मज्ञान के लिए करता है।

(iii) तर्कवादी पाश्चात्य परंपरा ने आत्मा को मानस और मानस को रूप से जोड़ कर देखा है।

(iv) 16वीं से 19वीं शताब्दी तक संस्कृति शब्द को फसलों और जानवरों के 'संवर्धन' से संबंद्ध कर देखा गया।

(v) संस्कृति का वर्णन विभिन्न परिप्रेक्ष्यों से किया जा सकता है।

(ब) 'संस्कृति' और 'सभ्यता' शब्द एक आदर्शवादी शब्द रूप में पहली बार कहाँ प्रयोग किए गए।

(i) भारत (ii) इंग्लैंड (iii) पूर्वी यूरोप (iv) पश्चिमी पूरोप

(स) 'कीवर्डस्' एक प्रसिद्ध काम है:

(i) क्रोबर (ii) क्लूक्हॉन (iii) रेमंड विलियम्स (iv) डब्यू. आई. थामस

(ड) लघु प्रश्न:

1. क्रोबर और क्लक्हॉन द्वारा संस्कृति के क्या विभिन्न अर्थ दिए गए हैं?

2. 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में किन रूपों में संस्कृति की समझ में परिवर्तन आये?

1.1.5 संस्कृति पर क्लासिकल विचार

एमिल दुर्खेम (Emile Durkheim), कार्ल मार्क्स (Karl Marx) और मैक्स वैबर (Max Weber) 'क्लासिकल' या 'आधुनिक' व्याख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं जो संस्कृति सामाजिक जीवन में अदा करती है।

(अ) दुर्खेम

डैविड एमील दुर्खेम (1858-1917) आधुनिक समाजशास्त्र के संस्थापकों में से एक थे। उन्हें समाज की संरचना, व्यक्ति और समाज के मध्य संबंध, एवं समाज का सरल से जटिल स्तर में रूपांतरण से संबंधित सिद्धांत प्रस्तुत किसी आधुनिक समाज में सामाजिक जीवन के अध्ययन के संदर्भ में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रथम अध्ययन प्रस्तुत करने वाले विद्वानों में से एक थे। उनके अनुसार एक व्यक्ति का व्यवहार प्राय: सामाजिक संरचना के विभिन्न पहलुओ से प्रभावित होता थी उनके संस्कृति और इसके समाज से कई संबंध के संदर्भ में आख्यान इस प्रकार है:

(i) संस्कृति व्यक्ति को समाजीकरण की प्रक्रिया के जरिए व्यापक समूह के साथ बाँधती है।

(ii) संस्कृति विघटनकारी वैयक्तिकता का सामना करने में सक्षम रूप से सहायता करती है।

(iii) सहमति की स्थिति में 'कार्य' हेतु समाज के लिए व्यक्तिगत पहचान को समष्टिगत सामूहिक पहचान द्वारा अवश्य विस्थापित होना चाहिए।

(iv) सामाजिक व्यवस्था की स्थापना एवं उसे बनाए रखने के लिए समष्टिगत पहचान और संस्कृति आवश्यक है।

(ब) कार्ल मार्क्स :

कार्ल हेनरिश मार्क्स (1818-1883) 19वीं शताब्दी के सबसे प्रभावशाली समाजवादी विचारकों में से एक थे। समाजिक विज्ञान के अध्ययन में उन्होंने आलोचनात्मक पद्धति का प्रयोग किया। मार्कस के अनुसार औद्योगिक समाज में संस्कृति एक विचारधारा की तरह कार्य करती है। उन्होंने संस्कृति को व्यवस्थित रूप में शक्तिऔर आर्थिक जीवन से जोड़ा।

(i) संस्कृति अथवा शासक विचार और मूल्य दूसरों के ऊपर अपने प्रभुत्व को न्यायोचित ठहराने के क्रम में शाासक समूहों द्वारा उत्पादित हैं।

(ii) संस्कृति सामाजिक व्यवस्था एवं नियंत्रण की ओर जाते हुए व्यक्ति पर अवरोध की तरह कार्य करती है।

(iii) शासक-वर्गों के उत्पीड़न से मुक्ति के लिए व्यक्तियों को उनकी सही वर्गीय पहचान आवश्यक है।

(iv) वर्गीय चेतना एवं पहचान क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन एवं नए सामाजिक प्रकार तथा नई सामाजिक संस्कृति की रचना की ओर ले जाते हैं।

(स) मैक्स वेबर :

कार्ल एमील मेक्सीमीलियन वेबर (1864-1920) जो मैक्स वेबर के नाम से लोकप्रिय हैं, ऐमील दुर्खेम और कार्ल मार्क्स के साथ समाजशास्त्र के तीन संस्थापकों में जाने जाते हैं। उनका संस्कृति संबंधी सिद्धांत मानव गतिविधियों की समझ पर आधारित है। वह आर्थिक समाजशास्त्र और धर्म पर आधारित समाजशास्त्र के विचारों को संबद्ध कर व्याख्या देने के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने पूँजीवाद के उत्थान में धार्मिक विश्वासो और विभिन्न सांस्कृतिक परंपराओं को भी महत्त्वपूर्ण माना।

(i) सामाजिक क्रम-विकास संयोगिक एवं आकस्मिक है।

(ii) यह मानवीय क्रिया और अंतरक्रिया है जो सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक क्रम विकास का कारण है।

(iii) इस अंतरक्रिया के परिणामों का अग्रिम पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता।

(iv) सांस्कृतिक विचार एवं मूल्य अर्थ-व्यवस्था और उत्पादन के प्रबंधन के तरीके पर निर्भर नहीं हैं।

1.1.6 संस्कृति के अध्ययन के प्रति रूख और इसका परिप्रेक्ष्य

1. फ्रांसीसी समाजशास्त्री पियर बूरदिय (Pierre Bourdieu) आज संस्कृति संबंधी सिद्धांत और शोध में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शख़्सियत हैं। उन्होंने कई अवधारणाओं जैसे क्षेत्र, लक्षणगत मौजूदगी, और सांस्कृतिक पूंजी को अधिवृद्ध किया है। पूंजी के तीन प्रकार सामाजिक शक्ति और सामाजिक असमानता का निर्धारण करते हैं। आर्थिक पूंजी वित्तीय संसाधनों का विवेचन करती है। सामाजिक पूंजी उन सामाजिक बंधनों से सरोकार रखती है जिन्हें लोग अपने लाभ के लिए अपनाते हैं। पियर बूरदिय की सांस्कृतिक पूंजी वह अवधारणा है जो कई आयाम रखती है।

   कला व संस्कृति का वस्तुनिष्ठ ज्ञान
   सांस्कृतिक अभिरूचि और वरीयताएँ
   औपचारिक योग्यताएँ
   सांस्कृतिक कौशल एवं विशेषज्ञता
   विवेकी होना तथा अच्छे व बुरे के बीच अंतर करने की योग्यता

2. संस्कृति संबंधी सिद्धांत पर ब्रिटिश सांस्कृतिक अध्ययन का महत्त्वपूर्ण प्रभाव है। संस्कृति के अन्वेषण में लोगों की प्राथमिक रूचि उस स्थिति में अधिक रहती है जब संस्कृति शक्ति और विरोध का प्रदर्शन करती है। रेमंड विलियम्स (Raymond Williams), रिचर्ड होगार्ट (Richard Hogart) और स्टुअर्ट हाल (Stuart Hall) इसके दीपस्तम्भ हैं। ग्रीम टर्नर (Graeme Turner) ने ब्रिटिश सांस्कृतिक अध्ययन की उपलब्धियों को इस प्रकार संक्षेपित किया है।

   संस्कृति की स्वायत्तता के लिए उत्साहित तर्क
   सत्ता शक्ति व सामाजिक संरचना के प्रति तात्पर्य के संपर्कों की स्पष्ट समझ।
   ग्रंथों एवं विचारधाराओं के सरलीकरण के लिए सैद्धांतिक रूप से समृद्ध एवं अंतर्विधात्मक रूख।
   परस्पर संवादों एवं साहित्यिक सिद्धांतों की व्याख्याओं के बारे में विचारों एवं ग्राम्सी (Gramsci) द्वारा दी गई राजनैतिक रणनीति की समझ के जरिये एक अभिकरण के संस्थापन की योग्यता।

3. अक्सर टिप्पणी की जाती है कि 1950 के दशक में सरंचनावादी आंदोलन ने संस्कृति के विषय में हमारे सोचने के तरीके में मूलभूत परिवर्तन किये। फर्डीनेंड द सौस्युर (Ferdinand de Saussure) जो एक प्रसिद्ध भाषाविद् थे ने भाषा और संस्कृति के प्रति संरचनावादी रूख की आधारशिला रखी। उनके अनुसार भाषा ऐसी ध्वनिकीय आकृति (शब्द ध्वनियों) को सम्मिलित करती है जो अवधारणाओं (विचारों अथवा सोचों) से संबद्ध है। उन्होंने इसे किसी दिये गए समय की भाषा प्रणाली के रूप में समझाने का प्रयास किया। उन्होंने पैरोल (बोली) से लाँग (भाषा) को अलग करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया। पैरोल भाषा प्रयोग की वास्तविक

प्रयोगसिद्ध घटनाओं को प्रकट करता था जबकि लाँग एक संरचना अथवा चिन्ह प्रणाली थी जो पैरोल पर आधारित है। अपनी रचना 'कोर्स इन जनरल लिंग्विस्टिक्स' में सौस्युर ने सुझाया कि ऐसे विज्ञान की धारणा संभव है जो सामाजिक जीवन के हिस्से के रूप में चिन्हों की भूमिका का अध्ययन करता हो। उन्होंने इसे सेमियोलॉजी (लक्षण विज्ञान) कहा। उनके परिप्रेक्ष्य संस्कृति के विश्लेषण के मुख्य उपागम बन गए। मानवशास्त्र, मनोविश्लेषण और सांस्कृतिक अध्ययन के विकास ने लक्षणशास्त्र को एक नवोन्मेषी और शक्तिशाली परंपरा के रूप में स्थापित कर दिया है जिसमें अन्य विधाएँ भी शामिल हैं।

क्लॉड लेवी स्ट्रॉस (Claude Levi Strauss) संस्कृति के अग्रणी संरचनावादी सिद्धांतकार के रूप में जाने जाते हैं। उनके उपागम की प्रमुख विशिष्टता संस्कृति की स्वायत्तता के मापन की उनकी योग्यता थी। उन्होंने यह दर्शाया कि सांस्कृतिक प्रणालियाँ कार्यकारिता के अपने नियम और तर्क रखती हैं। ब्रिकोलॉज और रूपांतरण की प्रणालियों के बारे में विचार पश्चिमी और गरै पश्चिमी दोनों संदर्भों में सांस्कृतिक रचनात्मकता व्यापक रूप में प्रयुक्त की गई है। हालांकि उनके आलोचक संकेत करते हैं कि उनकी कृतियों से शक्ति (सत्ता) के विचारों की अनुपस्थिति उत्सुकता उत्पन्न करती है। यहाँ यह रेखांकित करना महत्त्वपूर्ण है कि ऐसी कोई व्याख्या उपलब्ध नहीं है जहाँ मिथकशास्त्र संस्थागत हो जाते हैं क्योंकि वे सुनिश्चित स्वार्थों का समथर्न करते हौं एक अन्य आलोचना यह है कि लेवी-स्ट्रॉस संस्कृति को एक संक्षेपण या पृथक्करणों के रूप में देखते हैं जो सक्रिय मानवीय हस्तक्षेप के बिना अस्तित्त्व बनाए रखने में समर्थ है। यदि संस्कृति निर्धारणात्मक तरीके से कार्य करती है तो इसमें माध्यम की कोई भूमिका नहीं रह जाती। लेवी-स्ट्रॉस (स्मअप ैजतंने) की व्याख्या में रणनीति, माध्यम या ऐजेंसी या व्यक्तिगत प्रतिक्रियात्मकता के लिए बहुत अधिक स्थान नहीं है।

फ्रांसीसी बुद्धिजीवी एवं दार्शनिक रोलां बार्थ (Roland Barthes) 1950 के दशक में संस्कृति के प्रति-संरचनावादी रूख के एक अन्य अग्रदूत थे। उन्होंने भाषाविज्ञान तथा सांस्कृतिक जिज्ञासा के मध्य घनिष्ठता का समर्थन किया और उत्तर-संरचनावाद के लिए आंदोलन का नेतृत्व भी किया। बार्थ ने खाद्य प्रणाली, प्रथाओं आदि पर सेमिओटिक्स (Semiotics, लक्षणशास्त्र) का प्रयोग किया। उन्होंने सिन्टागम (Syntagam) और सिस्टम (System) के माध्यम से संकेतक (Signifier)/संकेतित (Signified) का विस्तार अन्य क्षेत्रों तक किया। उनकी पुस्तक 'माईथॉलजीस्' (Mythologiè) फ्रांसीसी दैनिक जीवन एवं संस्कृति को व्यक्त करती है। बार्थ के अनुसार संस्कृति के आंतरिक लक्षण कभी भी निर्दोष नहीं होते, बल्कि वे विचारधाराओं की जटिलता में बंधे रहते हैं। उनकी रचना 'माईथॉलजीस्' का मुख्य पहलू अभिधेयार्थ (Denotation) एवं लक्ष्यार्थ (Connotation) के अंतर का स्पष्टीकरण था। अभिधेयार्थ उदार अर्थों पर और लक्ष्यार्थ अतिरिक्त अर्थों (मिथकशास्त्रीय) पर आधारित था। बार्थ ने लक्षणविज्ञान को आलोचनात्मक सिद्धांत से मिला दिया। इसने अकादमी की परिधि में लोक प्रचलित संस्कृति के अध्ययन को वैधता प्रदान की। बार्थ ने दर्शाया कि कुश्ती जैसी कबाड़ संस्कृति की गतिविधियाँ अथवा मोटरवाहनों जैसी सांसारिक वस्तुएँ भी विश्लेषणकर्ताओं के अध्ययन के विषय बन सकते हैं। 1970 के दशक तक उनके विचारों ने विज्ञापन निर्माण, समाचार कार्यक्रमों और मुद्रित माध्यमों में ब्रिटिश सांस्कृतिक अध्ययनों को प्रभावित किया।

4. माइकल फूको (Michel Foucault) की उत्तर-संरचनावादी मॉडल का गठन करने और इसे संस्थागत स्वरूप देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। संभवतः संवाद (Discourse) ही फूको के चिंतन का केंद्रीय मूलभाव है। संवाद (Discourse) को वर्णन करने, परिभाषित करने, वर्गीकृत

करने और व्यक्तियों, वस्तुओं और यहाँ तक कि ज्ञान और चिंतन की सारभूत प्रणालियों के बारे में सोचने के तरीके के रूप में समझा जा सकता है। संवाद (Discourse) कभी भी शक्ति संबंधों से मुक्त नहीं थे। वे लोगों के समूहों के मध्य शक्ति ज्ञान की संबंधशीलता से पनपे। शक्ति या सत्ता सामाजिक जीवन का आधारभूत आयाम है जिससे बचा नहीं जा सकता। फूको ने सत्ता की सूक्ष्म-भौतिकी, सत्ता की उद्‌वहन प्रवृत्ति, सत्ता की खंडात्मक प्रकृति, सत्ता की रचनात्मक प्रकृति और शासकीयता की अवधारणा जैसे महत्त्वपूर्ण विचारों की प्रस्तुति की। फूको ने ऐतिहासिक अध्ययनों में 'छिपे हुए' और 'मौन' के इतिहास को विकसित करने का प्रयास किया ताकि उन्हें समझा जा सके जो 'विस्मृत', 'मौन' और 'सत्ताहीन' पक्ष की ओर हैं। उनकी विधि सांस्कृतिक पहचानों की रचना में उपयोगी है।

5. 'फोन्टाना पोस्ट-मॉडर्निज़्म रीडर' (Fontana Post–Modernism Reader) के संपादक डब्ल्यू०टी० एण्डरसन (W.T. Anderson) के अनुसार उत्तर-आधुनिकता सामाजिक जीवन के चार मुख्य क्षेत्रों में उपस्थित है, नामत: 'स्व' की अवधारणा परिवर्तनीय हो गई है, नैतिकता का अंत हो गया है, कला और संस्कृति में आचरण के कोई निर्धारित तरीके अथवा नियम नहीं हैं (निम्न अथवा उच्च संस्कृति की कोई विशिष्टता नहीं है) और भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने विश्व पर नाटकीय प्रभाव छोड़ा है। वैश्विक संचार, विश्व भ्रमण व पर्यटन तथा भूमंडल के आर-पार विचारों के विस्तार के कारण यह विश्व बहुत छोटा हो गया है। यह भी कहा जाता है कि एक 'ज्ञान-मीमांसीय' संदेह मौजूद है जो उत्तर-आधुनिकता का सार भाग है। हमें सत्ता अथवा ज्ञान के प्रमाण के लिए हमारी अवधारणात्मक श्रेणियों को सदैव प्रश्न करना चाहिए। हमें हमारे द्वारा प्रयुक्त अवधारणाओं के पीछे छिपे हुए पूर्वाग्रहों और उन तरीकों को प्रकट करने का प्रयास करना चाहिए जो प्रभुत्व की संबंधशीलता के पुनरुत्थान के लिए काम करते हैं। हमें अपने ज्ञान की समझ को ऐसे रूप में सोचने की आवश्यकता है जो सत्ता शक्ति से बाहर है। आज विज्ञान और आधुनिकता की आलोचना ने लोगों की रूचि ग्रंथों और प्रतिनिधि तत्त्वों की ओर जगाई है जिनके द्वारा ज्ञान का निर्माण होता है। इस प्रकार ज्ञान को ग्रंथात्मक रणनीतियों और लेखन के उत्पाद के रूप में देखा जाता है। कई उत्तर-आधुनिकतावादियों के लिए यह समय उत्पादन की प्रक्रिया पर आधारित न होकर अर्थव्यवस्था, संस्कृति, पहचान और जीवनशैलियों पर हो गया है जिसका आधार उपभोक्तावाद है। ऐसी स्थिति में ज्ञान एक पूर्ण सत्य न होकर एक प्रकार की वस्तु और शक्ति का एक रूप बन गई है। जिस प्रकार सत्य को सत्य की बहुलताओं में खंडित किया जा सकता है उसी प्रकार परम्पराओं को परम्परा की बहुलताओं द्वारा विस्थापित किया गया है। इस प्रकार प्रभावशाली सांस्कृतिक अर्थ की तलाश अब अर्थ की व्यक्तिगत खोज में बदल गई है और लोगों के लिए जीवनशैली चुनना उनकी अपनी पसंद पर निर्भर हो गई है।

बीसवीं शताब्दी में संस्कृति के उत्पादन और स्वीकरण पर काफी शोध किए गए जिसमे विशेष रूप से जनसंचार, फिल्म, चलचित्र अध्ययन, और समाजशास्त्र शामिल हैं। यह एक ऐसा रूख है जो समकालीन जांच-परख को प्रतिबिम्बित करता है। सैद्धांतिक रूपावली में बहुलवाद के बावजूद कुछ समान प्रधानताएँ भी इस परिप्रेक्ष्य में पहचानी जा सकती हैं।

(i) जब संस्कृति की व्यापक परिभाषा स्वीकार की जाए तो कला, पुस्तक, फिल्म अथवा प्रसारण जैसे मूर्त उत्पादों का भी अध्ययन किया जा सकता है (चित्रांकित संस्कृति, कैसेट संस्कृति, सांस्कृतिक उत्पाद, सांस्कृतिक वस्तुएँ इत्यादि)।

(ii) जनसंचार पर किये गए शोध से एक ऐसा मॉडल प्राप्त होता है जो संस्कृति को उस संदेश के समान देखता है जिसे रचा, प्रसारित और प्राप्त किया जाता है। विश्लेषण का प्राथमिक उद्देश्य सांस्कृतिक, तकनीकी तथा सामाजिक घटकों के प्रभाव का आंकलन करना है।

(iii) मुख्य केन्द्र बिन्दु सारभूत सामाजिक शक्तियों के बजाय कार्यकर्ताओं एवं संस्थाओं के संगठित अभिकरण पर है।

(iv) सांस्कृतिक रूपों का अध्ययन संक्षेपीकरण रूप में न होकर उनके संदर्भ-विशेष में किया जाना चाहिए।

उपभोग अथवा स्वीकरण संस्कृति (Consumption or Reception Culture) जनसंचार शोध के क्षेत्र का एक घटक है। इस परिप्रेक्ष्य में यदि बात करें तो अमरीकी संचार शोध परंपरा लाजार्सफेल्ड (Lazarsfeld) के साथ उत्पन्न हुई। यह भाववादी प्रवृत्ति को दर्शाता है तथा सूचना और विचारों के प्रचार-प्रसार के इर्द-गिर्द संगठित है। इस बात को किसी राजनैतिक प्रसारण के उपरांत होने वाले मतदान के रूझान में परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि किस प्रकार मतदान का रूझान किसी राजनैतिक प्रसारण को देखने के बाद परिवर्तित होता है। यह अध्ययन क्षेत्र ब्रिटिश सांस्कृतिक अध्ययनों की परंपरा से सशक्त रूप से प्रभावित है और प्रभावशाली विचारधाराओं एवं उनके कथनों एवं अभिप्रायों के मध्य एकरूपता/भिन्नता के प्रति श्रोताओं, दर्शकों के आलोचक होने की योग्यता को मान्यता देता है। उदाहरण के लिए टीवी के कार्यक्रम 'मूल पाठ' हैं जिनका उन दर्शकों द्वारा 'विश्लेषण' किया जाना होता है जो उनका अर्थ निकालने के लिए विशिष्ट प्रकार की 'अपेक्षाओं के क्षितिज' का प्रयोग करते हैं। स्वीकरण संस्कृति में व्यक्तिनिष्ठ स्वायत्तता पर बहुत बल दिया गया ताकि वे अपनी व्यक्तिगत समझ उत्पन्न करें। रचनाओं के प्रत्युतरों के रूप में प्रसन्नता, परिहास, और परिकल्पना मुख्य सरोकार हैं। डेविड मोर्ले (David Morley), डेविड बकिंघम (David Buckingham), जैनिस राडवे (Janice Radway) और जॉन फिस्के (John Fiske) इस क्षेत्र के मुख्य लेखकों में से हैं।

फिलिप स्मिथ (Philip Smith) ने उत्पादन व स्वीकरण (अभिग्रहण) संस्कृतियों का मूल्यांकन किया है तथा वे सकारात्मकताओं का सारांश इस प्रकार देते हैं-

1) कारणात्मक संपर्कों और प्रक्रियाओं को विशिष्ट संस्थानों एवं कार्यकत्ताओं में स्पष्ट तौर पर खोजा जा सकता है।

2) परिशुद्ध प्रविधियाँ अधिकतर प्रयोग की जाती हैं, विशेष रूप से तुलनात्मक दर्शक / श्रोता शोध में।

3) संस्कृति को किसी 'कार्यरूप' में परिणत किये गए अथवा 'बाहरी' अभिकरण के बजाय संहत या संग्रथित रूप में देखा जाता है।

4) शोध के लक्ष्य अंतहीन (जिसका अंत न हो) सैद्धांतिक कल्पनाओं और दावों के बजाय शोध के सुस्पष्ट निष्कर्षों की प्राप्ति का इरादा रखते हैं।

उपरोक्त क्षेत्र के सांस्कृतिक शोध की दो सामान्य आलोचनाएँ मौजूद हैं। सांस्कृतिक उत्पादन की विषयवस्तु दर्शकों / श्रोताओं की माँगों, पहरेदारों की रोकटोक, तकनीकी प्रगति और ऐसी अन्य वस्तुओं के संदर्भ में जिम्मेदारी उठाने का इरादा रखती हैं। इस प्रकार की स्थिति संस्कृति की स्वायत्तता के सैद्धांतिकरण की योग्यता को चेतावनी देती है। एक अन्य सरोकार यह है कि यह अध्ययन क्षेत्र संस्कृति की सीमित परिभाषा के साथ काम करने का इरादा रखता है। संस्कृति का विचार केवल 'कलाओं' अथवा रचनात्मक उत्पादों जैसा कि पारंपरिक रूप से परिभाषित हैं, से कहीं अधिक को संदर्भित करता है। इसमें दैनिक जीवन, विचारधाराएँ, प्रथाएँ, उपदेश व इस प्रकार की अन्य वस्तुएँ भी शामिल हो सकती हैं।

डेनियल डायन (Daniel Dayan) और एलिहू काट्ज (Elihu Katz), रॉबिन वागनर पैसिफिसि (Robin Wagner Pacifici), बैरी श्वार्ट्ज (Barry Schwartz), और रॉबर्ट वैथनो (Robert Wathnow) उत्पादन और स्वीकरण संस्कृति के क्षेत्र के उल्लेखनीय लेखकों में से हैं।

1.1.7 उपसंहार

भूमंडलीकरण को वैश्विक स्तर पर कार्यरत उन प्रक्रियाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो राष्ट्रीय सीमाओं के पार जाकर विश्व को वास्तविकता और अनुभव में अधिक अंतर्संबंधित बनाने वाले नए समय-स्थान संयोजन में समुदायों एवं संगठनों को समेकित व संबद्ध कर रही हैं। सांस्कृतिक पहचानों का विचार धर्म, लिंग, वर्ग, प्रजातीयता व देशीयता पर आधारित व्यक्तिगत अथवा सामूहिक पहचानों से उभरता है। आधुनिक काल में सांस्कृतिक पहचान जो प्रजाओं के गठन पर सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव रखती रही है राष्ट्रीय पहचान का बोध कराती हैं। राष्ट्र-राज्यों के पतन तथा भूमंडलीकरण प्रक्रिया के तीव्रीकरण ने निश्चित तौर पर राष्ट्रों की निष्ठा और पहचानों को प्रभावित किया है। उत्तर-आधुनिकतावादियों का दावा है कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को या तो मुक्तिदाता या बंधनकारी रूप में देखा जा सकता है। भूमंडलीकरण के कारण प्रस्तुत हो रही सांस्कृतिक अर्थों की बहुलता का अर्थ है कि व्यक्ति उनसे 'चयन व मिश्रण' कर सकता है और निरंतर बदलते एवं विस्तृत होते विश्व के साथ अपनी पहचान को रूपांतरित कर सकता है। हालांकि सांस्कृतिक प्रभाव का त्वरित विस्तार अनिश्चितता का सृजन कर सकता है- यह विभ्रम, विश्रृंखलता और सांस्कृतिक अव्यवस्था की ओर भी ले जा सकता है। मीडिया आलोचक मैक्ल्यूहान (McLuhan) ने 1960 के दशक में नई तकनीक पर आधारित 'वैश्विक ग्राम' और 'वैश्विक संस्कृति' की रचना के बारे में लिखा। भूमंडलीकरण ने इस बारे में सवाल खड़े किये हैं कि कैसे व्यक्तिगण समय व स्थान का अनुभव करते हैं और कैसे वे संस्कृति एवं पहचान का अनुभव तथा सृजन करते हैं। कुछ लोग भूमण्डलीकरण को मुक्ति एवं सृजनशीलता के स्रोत के रूप में देखते हैं, अन्यों की दृष्टि में यह हमारे सामने और अधिक जोखिम व नुकसान को पेश करता है।

अभ्यास-2

(अ) निम्न में 'सही' या 'गलत' बताईये:

(i) क्लॉड लेवी-स्ट्रॉस संस्कृति के अग्रणी संरचनावादी सिद्धांतकार के रूप में जाने जाते हैं।

(ii) फर्डीनेंड द सौस्युर एक जर्मन भाषाविद् थे

(iii) संस्कृति संबंधी सिद्धांत और संस्कृति के अन्वेषण में ग्रीम टर्नर एक अग्रणी नाम है।

(iv) संभाषण लोग, वस्तुएँ, ज्ञान एवं विविध विचारों की व्याख्या, परिभाषा, मंथन करने के तरीके के रूप में देखा जा सकता है।

(ब) ऐमील दुर्खेम, कार्ल मार्क्स और मैक्स वेबर के संस्कृति पर विचारों को कहा जाता है:

(i) पारंपरिक (ii) क्लासिकल

(iii) नव-क्लासिकल (iv) प्राचीन

(स) किसने कहा कि 'संस्कृति व्यक्ति को सामाजिक प्रक्रिया द्वारा एक विस्तृत समूह से जोड़ती है।

(i) पीयर बुरदीय (ii) मैक्स वैबर

(iii) कार्ल मार्क्स (iv) ऐमील दुर्खेम

(ड) रिक्त स्थानों की पूर्ति करो:

(i) डैनियल डायान एवं एलिहु काट्ज, रॉबिन वेगनर पेसिफिची, बैरी श्वार्ज एवं राबर्ट वाथनो ..... एवं ..... संस्कृति के कुछ उल्लेखनीय लेखक हैं।

(ii) संस्कृति संबंधी सिद्धांत एवं संस्कृति के अन्वेषण में फ्रांसीसी समाजशास्त्री ..... एक बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं।

(iii) ..... ने यह दर्शाया कि संस्कृति संबंधी के कार्य के अपने नियम और तर्क होते हैं।

(iv) ..... ने भाषा एवं संस्कृति के अध्ययन के लिए संरचनावादी दृष्टिकोण की नींव रखी।

(च) लघु प्रश्न:

1. संस्कृति पर मैक्स वेबर और कार्ल मार्क्स के प्रमुख लक्षणों को उजागर कीजिए।
2. संस्कृति के अध्ययन में प्रयुक्त कुछ प्रमुख परिप्रेक्ष्यों और दृष्टिकोणों की व्याख्या कीजिए।
3. सांस्कृतिक परंपराओं पर वैश्वीकरण / भूमंडलीकरण के प्रभाव पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. मिशेल फूको के संस्कृति संबंधी अध्ययन के दृष्टिकोण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(छ) दीर्घ प्रश्न:

1. मानव शास्त्र विज्ञानियों द्वारा संस्कृति शब्द के प्रयोग और परिभाषा का परीक्षण कीजिए।
2. संस्कृति की क्लासिकल समझ क्या है?
3. संस्कृति के अध्ययन के संबंधित विभिन्न परिप्रेक्ष्यों की विवेचना कीजिए।

संदर्भ-सूची

1. वारेन किड, 'कल्चर एंड आइडेन्टिटि', पालग्रेव, 2002
2. फिलिप स्मिथ, 'कल्चरल थ्योरी : ऐन इन्ट्रोडक्शन', ब्लैकवेल, 2001
3. ग्रीम टर्नर, 'ब्रिटिश कल्चरल स्टडीज़', रूटलेज, 1996
4. डायना क्रेन, 'द प्रोडक्शन ऑफ कल्चर', सेज, 1992

1.2 भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं में बहुलता

1.2.1 भूमिका

भारत की सांस्कृतिक परंपरा अत्यंत सम्पन्न रही है। भारतीय संस्कृति के कुछ विशिष्ट लक्षण इसकी पुरातनता, निरंतरता और विविधता हैं।

आत्मसात करने की सांस्कृतिक प्रवृत्ति भारतीय सभ्यता की एक अन्य विशिष्टता रही है। इन सभी लक्षणों ने मिलाजुला कर एक समग्र संस्कृति का विकास किया है और भारतीय संस्कृति को अत्यधिक विविधता प्रदान की है।

भारत में सांस्कृतिक परंपरा की निरंतरता का आवलोकन हड़प्पा सभ्यता के काल (3000ई.पू.) से किया जा सकता है।

उस काल के कई तत्त्व आज की हमारी परंपराओं में पाये जाते हैं। मेसोपोटामिया और मिस्र की सभ्यताओं के साथ-साथ हड़प्पा सभ्यता संसार की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। इस काल से भारत

ने लोगों का निरंतर विभिन्न रूपों में आगमन देखा है। यह प्रक्रिया जो प्राचीन काल में प्रारम्भ हुई और आज तक जारी है, भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का मूल तत्त्व है। हालांकि भारतीय सभ्यता ने सदैव सांस्कृतिक विविधता प्रस्तुत की है, परंतु आज के वैश्वीकरण के युग में, संस्कृति, विशेष रूप से बहुल संस्कृति ने अत्यधिक महत्वत्ता प्राप्त कर ली है। वैश्वीकरण समाज और संस्कृतियों को समीप ला रहा है, और अब समस्त विश्व में सांस्कृतिक पारस्परिकता का दौर प्रारंभ हो गया है। 'वैश्वीकरण' 'वैश्विक गाँव' जैसे शब्दों की बढ़ती लोकप्रियता विश्व में बहुल संस्कृति के बढ़ते प्रभाव की परिचायक है। इस संदर्भ में यदि हम देखें तो भारतीय सांस्कृतिक परंपरा की बहुलता महत्त्वपूर्ण हो जाती है जो संपूर्ण इतिहास में इसकी (भारत की) विशेषता रही है।

1.2.2 सांस्कृतिक बहुलता का अर्थ

समाज में सांस्कृतिक बहुलता एक ऐसे व्यवस्था की ओर ईशारा है जहाँ विभिन्न विश्वास, धर्म, भाषा आदि के लोग एक साथ रहते हैं। आर.के. चौधरी अपने निबन्ध 'सोसाईटी एंड कल्चर: प्लूरेलिटी ऑफ कल्चर इन इंडिया' में लिखते हैं कि ''बहुल संस्कृति का अर्थ है किसी समाज में बहुत सारी उप-संस्कृतियों का समानता के आधार पर सह-अस्तित्त्व। इस प्रकार के सांस्कृतिक बहुल समाज में अनेक उप-संस्कृतियों की भी मान्यता रहती है।'' के० एस० सिंह अपनी रचना 'पीपल ऑफ इंडिया: ऐन इंट्रोडक्शन' में लिखते हैं कि बहुल संस्कृति एक मधुकोष की भाँति है जिसमें अनेक समुदाय सक्रियता से एक दूसरे से जुड़े रहते हैं, एक दूसरे के साथ स्थान, भावनाएँ, और सांस्कृतिक तत्त्वों को साझा करते हैं। भीखू पारेख अपनी कृति 'रीथिंकिंग मल्टीकल्चरलिज़्म' में इसे और सरलता से व्यक्त करते हैं। वे कहते हैं बहुलता का निर्माण तब होता है जब विभिन्न संस्कृतियाँ किसी व्यवस्था में बिना विलय के और अपनी भिन्न पहचान बनाये रखते हुए सह-अस्तित्त्व भावना के साथ रहती हैं। ये विभिन्न संस्कृतियाँ समाज की उप-संस्कृतियाँ कही जा सकती हैं। इस प्रकार, ये उप-संस्कृतियाँ जिसका लोग अनुसरण करते हैं वह सांस्कृतिक विविधता की धारणा को प्रशस्त करती हैं।

भीखू पारेख सांस्कृतिक बहुलता और बहुसंस्कृतिवाद के बीच के अंतर को भी स्पष्ट करते हैं। उनके अनुसार बहुल संस्कृतियाँ वे हैं जिसमें भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ साथ-साथ रहती हैं परंतु उनमें से कुछ अपना वर्चस्व स्थापित कर लेती हैं। अत:, ऐसे समाजों में बहुलता तो रहती हैं परंतु समानता नहीं होती। अन्य शब्दों में, इस प्रकार की सांस्कृतिक व्यवस्था में सभी संस्कृतियों की समान भागीदारी नहीं हो पाती। वहीं बहुसंस्कृतिवादी समाजों में एक आदर्श के रूप में सभी संस्कृतियों को समान माना जाता है। भीखू पारेख अपने कथन को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि जो अंतर स्पष्ट किए गए हैं वे केवल आदर्श स्थितियों में ही कायम रह सकते हैं। उदाहरण के लिए, भारत में दोनों प्रकार के सांस्कृतिक लक्षण देखे जा सकते हैं। इंम्तियाज़ अहमद भी सांस्कृतिक बहुलता और बहुसंस्कृतिवाद के मध्य के अंतर को उजागर करते हैं। भारत के संदर्भ में वे दो प्रकार की सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के संचालन की बात करते हैं। एक 'सजातीय राष्ट्र' और दूसरा, 'राष्ट्रराज्य'। प्रजातीय बहुलता ने भी भारतीय संस्कृति को विविधता प्रदान की है। भारत में अनके प्रकार की प्रजातीय बहुलता विद्यमान है जो अलग-अलग आकारों, संस्कृतियों और धारणाओं के अनेक प्रजातीय समूहों से परिलक्षित होती है। प्रजातीय बहुलता के कारण कई विद्वानों ने भारत को एक 'राष्ट्र राज्य' की अपेक्षा 'राज्य राष्ट्र' के रूप में समझने का प्रयास किया है।

1.2.3 भारतीय सांस्कृतिक परंपराएँ, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत की सांस्कृतिक बहुलता कोई नवीन प्रक्रिया नहीं है। इसकी एक विशाल ऐतिहासिकता है। भारतीय संस्कृति चार सहस्राब्दियों से भी अधिक समय से चले आ रहे विभिन्न लोगों के बीच के संवाद, संपर्क का परिणाम है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति ऐसी संस्कृति रही है जिसने उन सभी तत्त्वों को आत्मसात करने का प्रयास किया जो इसके संपर्क में आये। इस आत्मसात करने की भारतीय परंपरा को हम हड़प्पा सभ्यता काल से देख सकते हैं।

हड़प्पावासियों के मेसोपोटेमिया, अफगानिस्तान, ईरान और मध्य एशिया से वृहत व्यापारिक और सांस्कृतिक संबंध थे। सिंधु सभ्यता के मृदभांडों और सील का मेसोपोटेमिया शहरों में पाया जाना और सिंधु सभ्यता के लोथल से मिले पोतगाह स्थापित करते हैं कि हड़प्पावसियों के बाहरी लोगों से संपर्क थे। इसी प्रकार, मेसोपोटेमिया सभ्यता की रचनाओं में हड़प्पा का मेलुहा नाम से वर्णन है जहाँ से कई प्रकार के उत्पाद जैसे लाजवर्द मणि, तांबा, सोना आदि आया करते थे। अफगानिस्तान के शॉर्तुघई से हड़प्पावासी लाजवार्द मणि का आयात करते थे। हड़प्पावासियों को कीमती पत्थर आदि मध्य एशिया से उपलब्ध होता था।

हड़प्पाई लोगों के धार्मिक विश्वासों के साक्ष्य भी हमें प्राप्त होते हैं। प्राप्त हुई अनेक हड़प्पाई सील यह इंगित करती हैं कि किस प्रकार लोग प्रकृति के विभिन्न रूपों की पूजा करते थे। यह एक रूचिकर तथ्य है कि इनमें से कुछ परंपराएँ आज के समय में भी विद्यमान हैं। उदाहरण के लिए कूबड़ वाले सांड़ को लोग आज भी आदर देते हैं जो कि हड़प्पा संस्कृति का एक तत्त्व था।

इसी प्रकार, एक हड़प्पाई सील में लोगों को पीपल वृक्ष के समक्ष खड़े हुए और पूजा करते हुए दिखाया गया है। यह परंपरा आज भी जारी है जब हम देखते हैं कि लोग पीपल के वृक्ष की पूजा करते हैं और फल-फूल आदि अर्पित करते हैं।

हड़प्पा सभ्यता के पतन के उपरांत भारत विभिन्न प्रकार के लोगों के समूहों का विश्व के विभिन्न क्षेत्रों से निरंतर होने वाले आगमन की प्रक्रिया का साक्षी रहा है। आर्यों का आगमन यह दर्शाता है कि किस प्रकार लोग बड़े समूहों में भारत आये और कालांतर में भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बसे। यह पूरा चरण जिसमें आर्यों का पलायन, आगमन और स्थायीकरण हुआ, उसे वैदिक काल कहा गया है। प्रारंभ में वे लोग सप्त-सिंधु क्षेत्र में बसे और कालांतर में गंगा नदी के क्षेत्र की ओर बढ़े। इस चरण की विशेषता वैदिक साहित्य का लेखन है। यह वह प्रक्रिया है जो छठी शताब्दी ईसा पूर्व के अंत में पूर्ण हुई।

इस काल का संपूर्ण सांस्कृतिक परिवेश वैदिक संस्कृति के रूप में जाना जाता है जिसकी झलक वैदिक साहित्य में देखी जा सकती है। हम वैदिक और ईरानी देवगणों में महत्त्वपूर्ण एकरूपता पाते हैं जो एक साझी धार्मिक आस्था को दर्शाता है। इसी प्रकार,यवनों का उद्धरण, ऐसा शब्द जिसका प्रारंभिक प्रयोग यूनानी लोगों के लिए किया गया परंतु बाद में सभी विदेशियों के लिए प्रयुक्त होने लगा, महाभारत में आता है जो लोगों के बीच विविध प्रकार के संपर्कों को दर्शाता है।

आर्यो ने, जिनके लिए कहा जाता है कि वे बाहर से आये, नई जीवन-शैली और सांस्कृतिक परंपराओं की शुरूआत की। वे अपने साथ भारत में अश्वचालित रथ और लोहा लाये। स्थानीय निवासियों से संपर्क ने नये सामाजिका-सांस्कृतिक मिश्रण की ओर अग्रसर किया जिससे आर्यों ने स्थानीय लोगों की संस्कृति को प्रभावित किया और बदले में स्वयं भी प्रभावित हुए। वैदिक साहित्य आर्यों के सांस्कृतिक संपर्क और परिवर्तन पर प्रचुर सूचनाएँ प्रदान करते हैं जो उनके स्थानीय लोगों से वैवाहिक संबंधों से

लेकर स्थानीय कर्मकांड, परंपराएँ आदि अपनाने तक शामिल है। इस प्रकार वैदिक काल के लोगों की संस्कृति आर्य और अनार्य तत्त्वों के समागम का प्रतिरूप है जो परिवेश की दृष्टि में एकता की अपेक्षा बाहुल्य परंपरा का द्योतक है।

आर्यों के उपरांत, यूनानी, शक, कुषाण, हुण, अरबवासी, ईरानी, तुर्की, मंगोल और यूरोपवासी भिन्न-भिन्न समय पर भारत आये। ये लोग अपने साथ अपनी सांस्कृतिक परंपराएँ लाये जो कालांतर में भारतीय जीवन शैली में समाहित होती गई। इस संमिश्रण से महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इसने भारतीय संस्कृति को विविधता प्रदान की। दूसरा, इसने एक संयुक्त संस्कृति के उत्थान को प्रशस्त किया। आज ये तत्त्व भारत की अवधारणा का आधार बन गए हैं। इस प्रकार उपरोक्त वर्णन दर्शाता है कि भारत में सांस्कृतिक बहुलता एक अत्यंत प्राचीन प्रक्रिया है जिसने हमें सांस्कृतिक रूप में अभिवृद्ध ही किया है।

अभ्यास-3

(अ) निम्न के लिए 'सही' या 'गलत' बताइये-

(i) सांस्कृतिक बहुलता से तात्पर्य समाज में कई संस्कृतियों के अस्तित्त्व से है।

(ii) वैश्वीकरण संस्कृतियों के संपर्क में सहायक रहा है।

(iii) सांस्कृतिक बहुलता को बहुसंस्कृतिवाद भी कहा जाता है।

(iv) हड़प्पा सभ्यता के पतन के उपरांत हड़प्पा परंपरा जारी नहीं रही।

(v) मेसोपोटेमिया सभ्यता भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे प्राचीन सभ्यता है।

(ब) लघु प्रश्न

(1) सांस्कृतिक बहुलता और बहुसंस्कृतिवाद के बीच के महत्त्वपूर्ण अंतरों को स्पष्ट कीजिए।

(2) विभिन्न परंपराओं के संपर्क से भारतीय सांस्कृतिक पंरपरा किस प्रकार अभिवृद्ध हुई?

1.2.4 सांस्कृतिक बहुलता के घटक

यहाँ यह प्रश्न पूँछना आवश्यक हो जाता है कि इस बहुलता का किस प्रकार निर्माण होता है? अन्य शब्दों में हमारी संस्कृति को कौन से तत्त्व बहुलता प्रदान करते हैं या इसके महत्त्वपूर्ण घटक क्या हैं? जैसा कि पहले ही लिखा गया है, बहुल संस्कृति का अर्थ है किसी एक समाज में कई संस्कृतियों का एक साथ सह-अस्तित्त्व। भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का अनुसरण करने वालों की जीवन शैली भी भिन्न होती है। वे अलग प्रकार से जीते हैं और उनका जीवन भी उन्हीं की संस्कृति के अनुरूप व्यवस्थित रहता है। इस प्रकार सांस्कृतिक बहुलता सांस्कृतिक विविधता को पुष्ट करती है। सांस्कृतिक बहुलता के कुछ महत्त्वपूर्ण तत्त्वों को निम्न रूप में उजागर किया जा सकता है।

• भौगोलिक लक्षणों में विविधता

3,287,263 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्रफल के साथ भारत एक विशाल देश है जहाँ वृहत भौगोलिक विविधता है। यहाँ मरूस्थल, वन, बर्फ आच्छादित पहाड़, लंबी तट रेखा, और उपजाऊ मैदान हैं। एक विशाल देश होने के कारण भारत के कुछ भाग अत्यधिक उपजाऊ हैं, वहीं ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ कुछ भी नहीं उगता। इस प्रकार भारत विभिन्न प्रकार के भौगोलिक परिदृश्य में सम्पन्न है।

उत्तर में हिमालय हैं जो वर्षभर बर्फ से ढँके रहते हैं। इसने तिब्बत और मध्य एशियाई क्षेत्रों से आने वाली शीत लहरों के प्रति एक सुरक्षा कवच का कार्य किया है। हिमालय पर्वत कई बड़ी नदियों के उद्गम के स्रोत के रूप में भी अत्यधिक लाभदायी रहे हैं। सिंधु, गंगा, और यमनु कुछ प्रमुख नदियाँ हैं

जो हिमालय पर्वत से निकलती हैं। ये नदियाँ भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी क्षेत्र की जीवन रेखा रही हैं। जैसा कि हम जानते हैं हड़प्पा सभ्यता सिंधु नदी के किनारे पनपी। इसी प्रकार वैदिक साहित्य में सप्त-सिंधु क्षेत्र का वर्णन आर्यों के स्थिर होते जीवन की प्रक्रिया में जल के महत्व को दर्शाता है। गंगा-यमुना दोआब एक अन्य अधिक उपजाऊ क्षेत्र रहा है जिसने सदियों से जीवन को पोषित किया है।

भारत के पश्चिमी भाग में मरूस्थल हैं। गंगा-यमुना दोआब के उपजाऊ मैदानी ईलाकों की अपेक्षा यह क्षेत्र शुष्क है जहाँ कुछ वनस्पतियों के अलावा शायद ही कुछ और उगता है।

भारत एक लंबी तटरेखा में भी संपन्न है। तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की सांस्कृतिक रूपरेखा पर्वतीय क्षेत्रों या आंतरकि क्षेत्रों में रहने वाले लोगों से भिन्न होती है। यहाँ का जीवन समुद्र के ईर्द-गिर्द व्यवस्थित रहता है जिससे उनकी जीवन शैली भू-केंद्रित न होकर समुद्रोन्मुख हो जाती है। उदाहरण के लिए, हड़प्पावासियों के मेसोपोटामिया से सामुद्रिक संपर्क भी थे। तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लोग अपने जीवन निर्वाह के लिएजल पर आश्रित रहते हैं। बल्कि जल उनके त्यौहारों, विश्वासों, खाद्य सामग्री आदि को भी स्वरूप देता है। इसके अतिरिक्त जलीय क्षेत्र उन लोगों से भी संपर्क साधने मे सहायक है जो अन्य देशों और सभ्यताओं से आते हैं।

भारत की जलवायु क्षेत्रों के अनुसार बदलती रहती है। यह ऐसे क्षेत्र जो अत्यंत गर्म हैं से लेकर ऐसे स्थानों तक है जहाँ कम से कम तापमान है। यदि मरूस्थल अत्यंत गर्म स्थान हो सकते हैं तब वहीं पहाड़ी क्षेत्रों के लोग शीत ऋतु का अनुभव करते हैं। मानसून का भी भारतीय जलवायु पर प्रभाव है। हमारे देश में ऐसे स्थान हैं जहाँ विश्व की सर्वाधिक वर्षा होती है, वहीं पश्चिमी भारत में ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ कम वर्षा होती है। इन विविध भौगोलिक और जलवायु के कारकों ने भारत में अनेक प्रकार की वनस्पतियों और जीव-जंतुओं को जन्म दिया। इसने भारतीय लोगों में अनेक प्रकार के सौदर्यबोधों की उत्पत्ति और रचना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

• प्रजातीय विविधता

प्रजाती से तात्पर्य ऐसे लोगों के समूह से है जिनके शारीरिक लक्षण जैसे नाक रंग, बालों के प्रकार, चर्म आदिअन्य लोगों से भिन्न होते हैं। ऐ० डब्लू० ग्रीन कहते हैं, "प्रजाती एक बड़े स्तर पर जैविक आधार पर किया गया मनुष्य का सामुहिकीकरण है जिनमें कई भिन्न और अनुवांशिक लक्षणएक निश्चित रूप में विद्यमान रहते हैं"।

भारत में अनेक प्रजातियों का बड़ी संख्या में पलायन हुआ। कालांतर में वे समस्त भारत में फैल गए जिसका परिणाम क्षेत्रीय /स्थानीय स्तर पर विविध प्रजातीय तत्त्वों का जमाव रहा। आज भारत अपनी प्रजातीय विविधता के कारण एक नृजाति विज्ञान संबंधी संग्रहालय बन गया है। एच०एच० रिस्ले (मृत्यु 1911) ने भारत की जनसंख्या को 7 प्रजातीय रूप में विभाजित किया- तुर्की इरानी, इंडो-आर्य, शक-द्रविड़ आर्य-द्रविड़, मंगोल-द्रविड़, मंगोलोइड, और द्रविड। परंतु आज के अधिकतर इतिहासकार रिस्ले के द्वारा किए गए इस प्रकार के विभाजन को स्वीकार नहीं करते। ऐ०सी० हैडन (मृत्यु 1940) रिस्ले के प्रजातीय विभाजन से सहमत नहीं थे। उन्होंने भारत के संदर्भ में अपने विभाजन का सिद्धांत दिया। उन्होंने प्रजातीयों को 5 श्रेणी में बाँटा: पूर्व-द्रविड़ कबीलाई लोग, द्रविड़, जो लंबे सिर वाले और काले थे, इंडो-आर्य जो सवर्ण और लंबे सिर वाले थे, इंडो-अल्पाइन जो चौड़े सिर वाले, और मंगोल। जे०एच० हट्टन (मृत्यु 1968) ने भी प्रजातियों को 5 श्रेणी में बाँटा: (1) नेग्रीटों (2) प्रोटो-ऑस्ट्रोलोइड (3)मेडीटीरेनियन, (a) ईस्ट मेडीटीरेनियन (b) मेडीटीरेनियन, (4) अरमाईड शाखा के

अल्पाइन लोग (5)मंगोलोइड (b) इंडो-आर्य। बी०एस० गुहा ने भारत की जनसंख्या को 6 प्रजातीय समूहों में श्रेणीबद्ध किया नेग्रीटो, प्रोटो-ऑसट्रोलोइड, मंगोलोइड, मेडीटीरेनियन या द्रविड़, पश्चिमी ब्राचीसीफल, और नॉर्डिक। इस प्रकार भारत एक विविध प्रजातीय जनसंख्या वाला देश है जो इसकी सांस्कृतिक विविधता में और रंग जोड़ देता है।

- **भाषा संबंधी बहुलता**

भारत अनेक भाषाओं और बोलियों का देश है। भारत का संविधान अपने आठवें श्ड्यूल में 22 भाषाओं को स्वीकृति देता है। ये हैं आसामी, बंगाली, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, कश्मीरी, कोंकणीं, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी संस्कृत, तमिल, तेलुगु, उर्दू, सिंधी, संस्थाली, बोड़ो, मैथिली, और डोगरी। देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी भारत की भाषा है।

परंतु भारत में सैकड़ों की संख्या में बोली जाने वाली बोलियाँ हैं। भारत की यह भाषायी विविधता बड़े ही प्रभावशाली रूप में हिंदी की एक उक्ति में उजागर होती है: कोस कोस पर बदले पानी, चार कोस पर बानी। इसका अर्थ है कि जहाँ भारत में एक-एक कोस पर पानी का स्वाद बदलने लगता है वहीं हर चार कोस के उपरांत लोगों की बोली में भी बदलाव आने लागता है। यहाँ यह कहना अतिशियोक्ति नहीं होगी कि भाषा किसी समाज की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का एक रूप है। उत्तर भारत की अधिकतर भाषाएँ इंडो- यूरोपीय भाषा परिवार की हैं। दक्षिण भारतीय भाषाएँ जैसे तमिल, तेलुगु, कन्नड़, और मलयालम द्रविड़ भाषाएँ कहलाती हैं। ये सभी भाषाएँ एक अत्यंत संपन्न साहित्यिक परंपरा की प्रतीक हैं। ए० आर० देसाई के शब्दों में, "भारत विभिन्न बोलियों के संग्रहालय का प्रतिरूप है"।

हिंदी देश में एक व्यापक स्तर पर बोली जाने वाली भाषा है। यह मुख्य रूप से उत्तर भारत के हिंदी भाषी क्षेत्रों में बोली जाती है जिसमें बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य शामिल हैं। हिंदी भाषा 18 बोलियों का सम्मिश्रण है। खड़ीबोली, ब्रज भाषा और अवधी इसके तीन सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। खड़ी बोली की उत्पत्ति पहली शताब्दी ईस्वी से देखी जा सकती है जब यह मेरठ क्षेत्र में कौरवी के रूप में बोली जाती थी। ब्रजभाषा का विकास गंगा-युमना दोआब में शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। अवधी का उद्भव कोशली या कौशली से है जो कोशल क्षेत्र की स्थानीय बोली थी।

पहली सहस्राब्दि ईस्वी का दूसरा भाग वह काल था जिसमें संस्कृति के अतिरिक्त अन्य कई भाषाओं का भारत में विकास हुआ। भक्ति आंदोलन के उद्भव ने इस प्रक्रिया को तीव्र करने में प्रमुख भूमिका निभाई। नौंवी शताब्दी से अट्ठारहवीं शताब्दी में अनेक क्षेत्रीय भाषाओं का विकास हुआ। भक्ति काव्य और साहित्य ने इन भाषाओं के उत्थान और व्यापकता में अहम योगदान दिया।

इस्लाम के आगमन ने भारतीय भाषाओं के दायरे को बढ़ाया है। न केवल विभिन्न स्तरों पर इस्लामिक और स्थानीय संस्कृतियों के बीच संपर्क हुआ बल्कि कई मुस्लिम कवियों ने एक नये प्रकार के साहित्य के विकास में योगदान दिया जिसे हिंद-फारसी साहित्य कहा गया। अमीर खुसरो, मसूद साद सलमान, अबुल फराज़ रूनी, ताजुद्दीन, शिहाबुद्दीन और अमीनुद्दीन प्रारंभिक चरण के कुछ उल्लेखनीय साहित्यकार थे। सूफीवाद ने इन विभिन्न संस्कृतियों के बीच एक सेतु का कार्य किया। ख्वाज़ा मोइनुद्दीन चिश्ती, हज़रत निजामुद्दीन, शेख नसीरूद्दीन चिराग-ए-देहलवी, शेख सलीम चिश्ती कुछ प्रसिद्ध सूफी थे जो न केवल मुसलमानों बल्कि कई हिंदुओं के आराध्य थे।

इसी काल में कई संत जैसे तुकाराम नामदेव, रामानंद, कबीर, गुरू नानक, सूरदास, मीरा बाई, रैदास, और तुलसीदास ने न केवल ईश्वर के प्रति भक्तिभाव के विचारों का प्रचार किया बल्कि साथ ही

देश की भाषा संबधी परंपरा कोभी अभिवृद्ध किया। कबीर के बीजक, नानक की साखियाँ, सूरदास, मीराबाई, रैदास और तुलसीदास के भजन और रचनाएँ न केवल लोकप्रिय हैं बल्कि लोगों के मानस पर भी उसका गहरा प्रभाव पड़ा है। अट्ठारहवीं शताब्दी में उर्दू का विकास एक प्रचलित भाषा के रूप मे हुआ। इसकी शुरूआत दक्कन क्षेत्र में सैनिक छावनी से हुई और 18वीं शताब्दी तक आते-आते यह दिल्ली में भी लोकप्रिय हो गई। मीर तकी मीर, मीर दर्द, सौदा और बाद में मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर और मिर्ज़ा गालिब ने अपनी गज़लों द्वारा उर्दू का और विस्तार किया। कालांतर में उर्दू ने अनेक भारतीय भाषाओं से शब्द, उक्तियाँ आदि ग्रहण की और इस प्रकार इसे एक वास्तविक भारतीय आधार प्राप्त हुआ। आज सामान्य हिंदी और उर्दू एक दूसरे में लगभग घुलमिल गई हैं। अंतर केवल इतना है कि हिंदी की अपेक्षा उर्दू में फारसी और अरबी के शब्द अधिक हैं।

आधुनिक हिंदी का विकास भारतेंदु हरिश्चंद्र के काल से प्रारंभ हुआ जिनके प्रयासों ने हिंदी को और लोकप्रिय बनाया। उनकी प्रसिद्ध उक्ति उनके हिंदी की विकास के प्रति कटिबद्धता को प्रस्तुत करती है। उन्होंने कहा था-

"निज भाषा उन्नति आहे, सब उन्नति को मूल,
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटे न हिए को शूल"

इसका अर्थ है कि विकास अपनी मातृभाषा का अनुसरण करने से संभव है: यह सभी प्रकार के विकास का स्रोत है, और बिना मातृभाषा के ज्ञान के अज्ञानता को दूर नहीं किया जा सकता और आत्म संतुष्टि प्राप्त नहीं हो सकती।

बीसवीं शताब्दी में प्रसिद्ध लेखकों जैसे प्रेमचंद, महादेवी वर्मा, जय शंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, रामधारी सिंह दिनकरआदि की रचनाओं ने हिंदी को महत्त्वपूर्ण साहित्यिक ऊँचाइयों तक पहुँचाया। इस प्रकार, भाषाओं की बहुलता देश में सांस्कृतिक बहुलता स्थापित करने का एक शक्तिशाली माध्यम रहा है। इस भाषाओं की विविधता के बावजूद एकता देखी जा सकती है क्योंकि अधिकतर भारतीय भाषाओं का उद्गम स्रोत एक ही रहा है जिसने भारत में बोली जाने वाली भाषाओं में एक मौलिक एकता का सूत्रपात किया है।

• धार्मिक विविधता

भारतीय संस्कृति का एक विशिष्ट लक्षण इसकी धार्मिक विविधता है। भारत लगभग सभी धर्मों का देश है। भारत किसी एक धर्म को महत्वत्ता नहीं देता। 2011 की गणना के अनुसार धार्मिक समुदायों की प्रतिशत में जनसंख्या इस प्रकार है। हिंदू 79-80%, मुस्लिम 14-23%, ईसाई 2.3%, सिख 1-72%, बौद्ध 0-70%, जैन 0-37%, तथा अन्य 0-66%।

भारत का सबसे प्राचीन धर्म वैदिक ब्राह्मणवाद है जो कई रचनाएँ जैसे वेद, संहिता, धर्मशास्त्र आदि में प्रस्तुत हुआ। परंतु ईसा की पहली सहस्राब्दि से भक्ति भाव पर आधारित पूजा का प्रचलन बढ़ने लगा। गुप्त काल के समय इसे हिंदू धर्म कहा गया। परंतु यह ऐकेश्वरवाद पर आधारित धर्म नहीं था। बल्कि इसमें कई उप-परंपराएं थीं। परंतु इन सभी धार्मिक परंपराओं को हिंदू धर्म के श्रेणी में रखा गया। इस्लाम एक अन्य महत्त्वपूर्ण धर्म है जिसके अनुयायी भारत की जनसंख्या का 14.23% है।

भारत का ईस्लाम से वास्तविक संपर्क 8वीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में सिंध पर अरबों के आक्रमण से हुआ। दिल्ली सल्तनत की स्थापना और इसके विस्तार के उपरांत इस्लाम का प्रचार-प्रसार भारत के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। जनगणना के अनुसार आज इस्लाम भारत का दूसरा बड़ा धर्म है।

ईसाई धर्म का अनुसरण 2.3% भारतीय करते हैं। ईसाई धर्म का भारत में आगमन ईसा की पहली शताब्दी में सेंट थॉमस के द्वारा हुआ। 15वीं शताब्दी के अंत में जो पुर्तगाली भारत आये उन्होंने गिरजाघर बनवाये। भारत में ईसाई धर्म के रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट समुदाय का वर्चस्व है।

सिख धर्म एक अन्य महत्त्वपूर्ण धर्म है। गुरु ग्रंथ साहिब सिख धर्म की धार्मिक पुस्तक है जिसमें संतों और सूफियों के कई भजन हैं। गुरूद्वारा सिखों का पूजा स्थल है। एक सिख की पहचान पाँच विशिष्ट लक्षणों से की जा सकती है 'केश', 'कंघा', 'कच्छा', 'कड़ा', और 'कृपाण। सिख धर्म के अनुयायी मुख्य रूप से पंजाब और हरियाणा में रहते हैं। परंतु सिखों की एक बड़ी संख्या दिल्ली और उत्तर प्रदेश में भी रहती है।

बौध धर्म की उत्पत्ति छठी शताब्दी ईसा पूर्व में भारत मे हुई। यह धर्म उस काल में विद्यमान ब्राह्मणवादी परंपराओं के विरूद्ध एक प्रतिक्रिया के रूप में उदित हुआ। गौतम बुद्ध की शिक्षाएँ बौद्ध धर्म का आधार हैं। बाद में बौद्ध धर्म श्री लंका, चीन, जापान, मलेशिया और अन्य ऐशियाई देशों में फैला। डॉ० बी० आर० अम्बेडकर जो हमारे संविधान के निर्माताओं में से एक थे ने 1956 में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया था। डॉ० अम्बेडकर के इस कदम से बौद्ध धर्म को अपने जन्मस्थान पर जहाँ बौद्धों की संख्या तीव्रता से कम हो रही थी एक बड़ा समर्थन मिला। ऐ० एल० बाशम के शब्दों में "कुछ लोगों का स्वप्न' पुन: 'लाखों की जीवंत आशा' बन गई।

जैन भारतीय जनसंख्या का 0.37% है। जैन धर्म की उत्पत्ति भारत में छठी शताब्दी ईसा पूर्व में हुई। जैन परंपरा के अनुसार महावीर इसके 24वें तीर्थंकर हैं। जैन धर्म अहिंसा और आत्मनियंत्रण को अत्यधिक महत्वत्ता देता है। जैन धर्म के अहिंसा के दर्शन का महात्मा गाँधी पर भी बहुत प्रभाव पड़ा जिन्होंने इसका जीवन में निष्ठा से अनुसरण किया। जैन धर्म के अनुयायी ज्यादातर महाराष्ट्र, राजस्थान, और गुजरात में हैं।

• जातीय विविधता

समाज में ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र पर आधारित चार वर्गीय विभाजन का परिणाम कई जातियों के उद्‌भव के रूप में हुआ। इस प्रकार के विभाजन का पहला उल्लेख ऋग्वेद के दसवें मंडल में आता है। इसने ब्राहमण को सामाजिक व्यवस्था में शीर्ष पर रखा। इसमें अधिकतर शिक्षित लोग थे जिन्हें वेदों का ज्ञान था। क्षत्रिय योद्धा थे जो राज्यों पर शासन करते थे तथा लोगों की रक्षा करते थे। वैश्य व्यापारिक कार्यो में संलग्न थे। शूद्र जो सामाजिक व्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर थे वे अन्य तीनवर्ग के लोगों की 'सेवा' करते थे। इस प्रकार की व्यवस्था भारत में उत्तर वैदिक काल से जब यह व्यवस्था शुरू हुई तब से प्रचलित रही।

प्रारंभिक मध्यकाल में जातियों की संख्या में वृद्धि होने के परिणामस्वरूप कई जातियों का उद्‌भव हुआ। यह प्रक्रिया बाद में भी जारी रही। आज भारत में अनेक जातियाँ हैं परंतु अधिकतर जातियाँ उन चार वर्गों की श्रेणी में आती है। जाति से तात्पर्य एक ऐसे अनुवांशिक समूह से है जो एक विशेष पारंपरिक व्यवसाय का अनुसरण करता है। भारत में 3000 से भी अधिक जातियाँ हैं परंतु सामाजिक वर्गीकरण में विभिन्न क्षेत्रों में वे भिन्न-भिन्न स्तर पर हैं।

अभ्यास 4

(अ) निम्न के लिए 'सही' या 'गलत' बताईये-

(i) भौगोलिक लक्षण भी सांस्कृतिक विविधता प्रदान करते हैं।

(ii) द्रविड़ भाषाएँ इंडो-यूरोपीय परिवार की हैं।

(iii) गुरु नानक सिखों के पहले गुरू हैं।

(iv) अहिंसा जैन धर्म का आधार है।

(v) जैन धर्म के अहिंसा के सिद्धांत का महात्मा गाँधी पर बहुत प्रभाव पड़ा।

(ब) रिक्त स्थानों की पूर्ति करो-

(i) ..... (गंगा और यमुना) कुछ महत्त्वपूर्ण नदियाँ हैं जो हिमालय पर्वत से निकलती हैं।

(ii) एच०एच० रिस्ले ने भारत की जनसंख्या को ..... (7/5) प्रजातियों की श्रेणी में विभाजित किया।

(iii) भारत का संविधान अपने आठवें श्ड्यूल में ..... (18/22) भाषाओं को स्वीकार करता है।

(iv) हिंदी भाषा ..... (15/18) बोलियों का समूह है।

(स) लघु प्रश्न

1. भारत में धार्मिक विविधता पर एक लेख लिखिए।
2. भारत में भाषा पर आधारित विविधता पर एक निबंध लिखिए

1.2.5 अनेकता में एकता

भारतीय संस्कृति की विशिष्टता इसकी अनेकता में एकता है। भारत की सांस्कृतिक विरासत यह दर्शाती है कि कई प्रकार के अंतरों के बावजूद भारत में एकता का ऐसा सूत्र है जो सभी भारतीयों को आपस में बाँधता है। यह हमारी संस्कृति की गतिशीलता और लचीलापन है जिस कारण यह संस्कृति इतने अंतरों और विविधताओं के बावजूद इतनी सदियों तक जीवंत रही। हमारी संस्कृति की एक विशिष्ट बात यह है कि हम किसी भी क्षेत्र में रहें पर हम स्वयं को सांस्कृतिक रूप से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं। उदाहरण के लिए, लोहड़ी और बैसाखी, आसाम में बिहु, और तमिल नाडु में पोंगल फसल कटाई के त्यौहार संपूर्ण भारत को हर्ष और उल्लास के अहसास से एक कर देता है।

इसी प्रकार की भावना 14 जनवरी को मनाये जाने वाले मकर संक्राति में भी होती है। होली, ईद, दिवाली और क्रिसमस अन्य बड़े त्यौहार हैं जो पूरे भारत में मनाये जाते हैं। हम देखते हैं कि चाहे त्यौहारों के नाम अलग हों परंतु चारों ओर भावना एक समान ही रहती है जो एकता का सूत्रपात करती हैं। यही वह सदियों से चली आ रही सांस्कृतिक प्रक्रिया है जिसे हम 'गंगा- जमुनी तहज़ीब' का नाम देते हैं जिसका अर्थ है संयुक्त संस्कृति।

इस सांस्कृतिक सामंजस्य को हमारा संविधान भी स्वीकार करता है। संविधान का अनुच्छेद 51A इसकी महत्वत्ता को इस प्रकार बताता है कि 'यह भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह भारत की मिश्रित संस्कृति का सम्मान और संरक्षण करें। अनुच्छेद आगे कहता है कि नागरिकों का एक मौलिक कर्तव्य यह भी है, कि वे धर्म, भाषा, क्षेत्रवाद से ऊपर उठ कर भारतीयों में भाईचारे की भावना को

बढ़ावा दें व नारी विरोधी परंपराओं को त्यागें। यह तथ्य राज्य द्वारा अनेकता में एकता की स्वीकृति का सूचक है।

भारतीय संस्कृति ने पश्चिमी विचारों और अवधारणाओं को भी आत्मसात किया है। आज यह विशेष तौर से भारतीय जीवनशैली के निर्माण में योगदान दे रहा है। वैश्वीकरण इस प्रक्रिया को और तीव्र बना रहा है। महात्मा गांधी ने अपनी साप्ताहिक पत्रिका 'यंग इंडिया' में भी इस बात पर जोर दिया कि भारतीय संस्कृति का मूलभाव इसकी अनेकता में एकता है।

भारतीय संस्कृति अनेकता को स्वीकार नहीं कर सकती, यदि ऐसा हुआ तो भारतीय संस्कृति अपनी पहचान खो देगी। अनेकता में एकता भारतीयता का अहसास दिलाने का आधार है। इसी तथ्य को अलामा इकबाल ने अपनी एक कविता में भी उजागर किया जब उन्होंने कहा–

"युनान-ओ- मिस्त्र- ओ-रोमा सब मिट गये जहान से,
अब तक मगर है बाकी नामों-निशां हमारा,
बात है कुछ ऐसी कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौरे- जहाँ हमारा।"

इस प्रकार हम विविधता अपनी परंपराओं, रीति-रिवाजों, आदतों रूचियों आदि में देखते हैं परंतु इन सब विविधताओं के बावजूद हम भारतीय हैं। यह भारतीय होने का अहसास ही है जिसने भारत में विविधता में एकता का सूत्रपात किया है।

अभ्यास-5

(अ) निम्न के लिए 'सही' या 'गलत' बताईये–

(i) बिहु और पोंगल क्रमशः आसाम और तमिलनाडु में मनाये जाते हैं।

(ii) सांस्कृतिक अनुरूपता को हमारे संविधान के अनुच्छेद 51 में स्वीकार किया गया है।

(iii) महात्मा गाँधी सांस्कृतिक विविधता के विरूद्ध थे।

(iv) अलामा इकबाल ने अपनी कविता से भारतीय संस्कृति की महानता को उजागर किया।

(v) विविधता में एकता भारत की शक्ति है।

(ब) लघु प्रश्न–

1. भारत में विविधता में एकता की अवधारणा पर एक संक्षिप्त विवेचना प्रस्तुत कीजिए।

(स) दीर्घ प्रश्न–

1. भारतीय सांस्कृतिक परंपरा पर एक लेख लिखिए।
2. सांस्कृतिक बहुलता के महत्त्वपूर्ण घटकों की विवेचना कीजिए।

1.2.6 उपंसहार

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सांस्कृतिक बहुलता भारत के अस्तित्त्व का आधार है इसे कई नेताओं जैसे महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, सुभाषचंद्र बोस, मौलाना अबुल कलाम आजाद, रवींद्र नाथ टैगासेर और अन्य ने उजागर किया। भारतीय संस्कृति एक संपन्न धरोहर है जिसका न केवल

सम्मान और सरंक्षण किया जाना चाहिए बल्कि इसके विचारों का अत्यधिक प्रचार-प्रसार भी किया जाना चाहिए। यह भारत की शक्ति है तथा इसका और संवर्धन किया जाना चाहिए।

आज की लोकतांत्रिक व्यवस्था में यह आवश्यक है कि एक तार्किक दृष्टिकोण, अन्य धर्मो और संस्कृतियों के प्रति सम्मान, सहिष्णुता और क्षेत्रीय विविधताओं की स्वीकार्यता आदि का विकास हो। ऐसी स्थिति में ही सामाजिक विषमताओं को कम किया जा सकेगा तथा सांस्कृतिक परंपराएँ और अधिक सशक्त होंगी।

संदर्भ सूची

1. वी. पी. सिन्हा, इंडिया'ज कल्चर- द स्टेट, द आर्ट एंड बियोंड, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, 1998.
2. भीखू पारेख, रीथिंकिंग मल्टीकल्चरलिज़्म: कल्चरल डाइवर्सिटी एंड पोलिटिकल थ्योरी, हार्वर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, 2000.
3. इम्तियाज़ अहमद, पार्थ एस० घोष, और हेलमट रेफेल्ड (संपादित), प्लूरेलिज़्मं एंड इक्वेलिटी: वैल्यूज़ इन इंडियन सोसाइटी एंड पोलिटिक्स, दिल्ली, 2000.
4. के०एस० सिंह, पीपल ऑफ इंडिया: ऐन इंट्रोडक्शन, खंड, ऐंथ्रोपोलोजीकल सर्वे ऑफ इंडिया, 1992.
5. मलिक मोहम्मद, द फाउंडेशनस ऑफ द कंपोजिट कल्चर इन इंडिया, आकार बुक्स, दिल्ली, 2007.
6. पार्थ मित्तर, इंडियन आर्ट, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, नई दिल्ली, 2001.
7. रशीदुद्दीन खान (संपादित), कंपोजिट कल्चर ऑफ इंडिया एंड नेशनल इंटीग्रशेन, शिमला, 1987.
8. आर. के. चौधरी, सोसाइटी एंड कल्चर: प्लूरेलिटी ऑफ कल्चर इन इंडिया, http://www.ignou.ac.in/upload/unit%2016.pdf
9. एस०ऐ० अज़ीज साहेब बी० फ्रांसिस कुलकर्णी और के०के० मिश्रा (संपादित) कल्चरल प्लरेलिज्म: द इंडियन सिनारियो, ग्यान बुक्स प्रा० लि०, नई दिल्ली, 2012.
10. एस० आबिद हुसैन, द नेशनल कल्चर ऑफ इंडिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2003.

1.3 संस्कृति के अनेक रूप

1.3.1 भूमिका

संस्कृति शब्द के अनेक अर्थ हैं। अल्फ्रेड क्रोबर और क्लाइड क्लूक्हॉन अपनी पुस्तक 'कल्चर: ए क्रिटिकल रिव्यू ऑफ कॉन्सेप्टस् एंड डेफिनीशनस् (1952) में संस्कृति के कई अर्थ बताते हैं। यह दर्शाता है कि संस्कृति की कोई एक सार्वभौमिक परिभाषा नहीं हो सकती। रेमंड विलियम्स ने संस्कृति को 'एक जीवन शैली' के रूप में परिभाषित किया। इसके अंतर्गत लोगों की परंपराएँ, विश्वास, जीवन मूल्य, धर्म, कर्मकांड, तौर-तरीके, वेशभूषा, भाषा, कला और सौंदर्यपरकता आदि शामिल हैं। भारत एक विशाल देश है जहाँ अनेक लाक्षणिक विविधताएँ हैं, अत: यहाँ संस्कृति के भी अनेक रूप विद्यमान हैं। संस्कृति के अनेक रूपों में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार की संस्कृतियाँ शामिल हैं। हाल के समय में महानगरो में मॉल संस्कृति, मेट्रो संस्कृति आदि अनौपचारिक संस्कृतियों का उदय हुआ है जो लोगों में लोकप्रिय हो रही हैं। कुछ सांस्कृतिक रूप जो संस्कृतियों को अनेकता प्रदान करते हैं वे इस प्रकार हैं-

1.3.2 लोकप्रिय संस्कृति

लोकप्रिय संस्कृति से तात्पर्य उत्पादों संगीत, कला, साहित्य, फैशन, नृत्य, फिल्म, टेलीविजन, रेडियो आदि जैसे सांस्कृतिक उत्पाद का संकलन है जिनका प्रयोग मुख्यत: 'आम लोगों' द्वारा किया जाता है। इस प्रकार लोकप्रिय संस्कृति को मुख्यत: आम जनता की संस्कृति के रूप में देखा जाता है। जॉन स्टोरी अपनी कृति 'कल्चरल थ्योरी एंड पॉपूलर कल्चर' में लोकप्रिय संस्कृति की छह परिभाषा देते हैं। उनके अनुसार लोकप्रिय सांस्कृतिक उत्पाद एक बड़े जनमानस को अपील करते हैं। लोकप्रिय संस्कृति निरंतर बदलती रहती है और काल तथा स्थान के अनुसार भी निर्धारित होती रहती है। पीटर बर्क अपनी रचना 'पापुलर कल्चर इन अर्ली मॉर्डन यूरोप' में कहते हैं कि हलांकि यूरोप की जनसंस्कृति में एक प्रकार की एकरूपता देखने को मिलती है परंतु इसके बावजूद इसमें भौगोलिक लक्षण के आधार पर सांस्कृतिक विविधताएँ विद्यमान थीं।

इटली के विचारक ऐंटोतियों ग्रामशी के अनुसार लोकप्रिय संस्कृति एक प्रकार से स्थापित संस्कृति के प्रति विरोध का माध्यम है।

जन संस्कृति के निर्माण में लोकसाहित्यिक तत्त्वों ने मुख्य रूप से योगदान दिया है। ये तत्त्व समाज को सांस्कृतिक एकता के सूत्रपात में बाँधने का प्रयास करते हैं। इसके अतिरिक्त जन संस्कृति की उत्पत्ति 'मास मीडिया' और मौखिक रूप से भी होती है। आजकल 'मास मीडिया' जनसंस्कृति के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। आज मनोरंजन, खेलकूद, टेलीविजन आदि इस क्षेत्र के सशक्त माध्यम बन गए हैं। उदाहरण के लिए, फिल्म में 'आइटम' गीत बड़ी ही शीघ्रता से लोगों में लोकप्रिय हो जाते हैं और उन्हें 'लोकप्रिय' स्वीकार्यता भी प्राप्त हो जाती है।

1.3.3 उच्च संस्कृति

साधारणत: उच्च संस्कृति का अर्थ उच्च वर्ग के लोगों या शिक्षित लोगों की संस्कृति से लगाया जाता है। मैथ्यू अर्नाल्ड 'कल्चर एंड एनार्की' में लिखते हैं कि अधिकतर लोगों का यह विचार है कि उच्च संस्कृति नैतिक और राजनैतिक स्थिरता के लिए शक्ति हैं। वहीं टी०एस० इलीयट अपनी कृति 'नोट्स टूवर्डस द डेफीनीशन ऑफ कल्चर' में कहते हैं कि संस्कृति के दोनों तत्त्व एक संपूर्ण संस्कृति के लिए आवश्यक हैं। ग्रामशी के अनुसरणकर्ताओं ने संस्कृति को 'सामाजिक नियंत्रण का माध्यम' माना। अर्नस्ट गेलनर ने उच्च संस्कृति को कला से आगे रखा। अपनी रचना 'नेशंस एंड नेशनलिज्म' में वे इसे परिभाषित करते हुए कहते हैं कि यह एक ऐसी संस्कृति का पर्याय है जो संदर्भरहित संपर्क को बढ़ावा देता है। वहीं पीयर बूरदीअ ने 'डिस्टिंकशन: ए सोशल क्रीटीक ऑफ द जजेंमट ऑफ टेस्ट' में लिखा कि उच्च संस्कृति एक निश्चित 'रूचि' की ओर संकेत है जिसमें व्यवहार, उत्तम भोजन की सराहना की सतृत भावना, मदिरा तथा यहाँ तक सेना सेवा भी शामिल है पर यह उन सामाजिक रीतियों की ओर भी संकेत करती है जो अनुमानत: उच्च वर्ग द्वारा अनुसरण की जाती है तथा जो निचले वर्ग के लोगों के लिए उपलब्ध नहीं है।

उच्च संस्कृति को कभी-कभी सराहने की उस पद्धति से भी जोड़ कर देखा जाता है जिसे 'शास्त्रीय या उच्च कला' कहा जाता है। इसमें चित्रकला, शास्त्रीय संगीत और रंगमंचीय कला शामिल हैं। उदाहरण के लिए, अंग्रेज़ी सिनेमा, ओपेरा, क्लासिकल रंगमंच, काव्य आदि को उच्च संस्कृति से जुड़ा हुआ माना जाता है। इस प्रकार उच्च संस्कृति प्राय: किसी समाज की उच्चतम कलात्मक और साहित्यिक उपलब्धियों की प्रतिनिधि के रूप में भी देखी जाती है। परंतु इस पर कई प्रश्न भी खड़े किए जाते हैं क्योंकि ऐसी कला महान या गौण है यह एक व्यक्तिपरक तत्त्व है न कि सार्वभौमिक। उच्च संस्कृति के कुछ चिन्हों में क्लासिकल नृत्य देखना या कला प्रदर्शनी देखना आदि शामिल हैं।

1.3.4 कबीलाई संस्कृति

कबीलाई संस्कृति से तात्पर्य किसी भी कबीले की संस्कृति से है। भारत में अनेक कबीले हैं जिनकी अपनी अलग संस्कृति है। भारत में कबीलाई जनसंख्या लगभग 2 करोड़ (20 मिलियन) है। यह स्पष्ट रूप से उनकी संस्कृति में व्याप्त अनेकता की ओर संकेत करती है। परंतु फिर भी कबीलों में कुछ निश्चित एकरूपता भी देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए, कबीलाई लोग साधारणत: प्रकृति के सानिध्य में रहते हैं तथा ज्यादातर प्राकृतिक उत्पादों पर निर्भर रहते हैं। कबीलाई लोगों की अन्य विशेषता उनकी सादगी तथा जीवंत व्यवहार है। उनके मनोरंजन के तरीके भी सरल हैं जिसमें नृत्य और गीत शामिल हैं। त्यौहारों के अवसर पर कबीलाई लोगों में मद्यपान का चलन है। परंतु साथ ही कबीलाई लोगों की स्पष्ट विविधताएँ भी हैं। कबीलों के अपने आराध्य होते हैं। जहाँ कुछ कबीलों में पुरुष देवताओं का वर्चस्व है वहीं कुछ कबीलों में नारी शक्तियों की प्रधानता है। उदाहरण के लिए मातृदेवी की पूजा। कबीलाई लोग अपनी पहचान के प्रति काफी सजग हैं और उसे त्यागना नहीं चाहते। ओराओन, संथाल, और कुकी कुछ कबीले हैं जो भारतीय कबीलाई संस्कृति की एक झलक प्रस्तुत करते हैं।

1.3.5 लोक संस्कृति

लोक संस्कृति से तात्पर्य स्थानीय परंपरा पर आधारित संस्कृति से है। पहले लोक संस्कृति को ग्रामीण लोगों की परंपरा और रीति-रिवाज के प्रतिनिधि के रूप में देखा जाता था। परंतु अब इसे ग्रामीण और शहरी दोनों के तत्त्वों के प्रतिनिधि के रूप में माना जाता है। लोक संस्कृति की एक अन्य विशेषता यह है कि यह अधिकतर स्थान से जुड़ी होती है। इसका अर्थ यह है कि लोक संस्कृति अपने स्थान या क्षेत्र से जुड़ी होती है। यदि किसी लोक संस्कृति को किसी अन्य स्थान पर स्थानांतरित कर दिया जाये उसके बावजूद यह अपने मौलिक क्षेत्र से संबद्ध रहती है। साधारणत: लोक संस्कृति आलेख्य परंपराएँ हैं जो मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी हस्तांतरित हुई हैं। भारत की एक संपन्न लोक-सांस्कृतिक परंपरा है जो यहाँ व्याप्त विविधताओं का परिणाम है। लोककथाएँ, लोकगाथाएँ, मौखिक परंपरा, लोकप्रिय कहावतें आदि लोक संस्कृति के महत्त्वपूर्ण घटक हैं। किसी स्थान/ क्षेत्र की लोक संस्कृति साधारणत: उस क्षेत्र के लोगों और उनकी परंपराओं से संबद्ध होती है। अत: यह किसी भी बाह्य स्रोत का विरोध करती है। इस प्रकार लोक संस्कृति में सामुदायिक अपनत्व का अहसास अधिक रहता है। पंजाब का भांगड़ा और गिद्दा, आसाम का बिहु कुछ लोक नृत्य हैं जो इन क्षेत्रों की लोक संस्कृति के प्रतिनिधि हैं। भारत में सभी अवसरों के लिए लोक परंपराएँ हैं। बच्चे का जन्म, विवाह फसल कटाई, त्यौहार या कर्मकांड, ये सभी लोक संस्कृति में प्रस्तुत होते हैं।

1.3.6 कैसेट संस्कृति

कैसेट संस्कृति से अभिप्राय संगीत के श्रव्य-कैसेट के रूप में रिकॉर्ड और उनके व्यापक उत्पादन और बिक्री से है। इसकी शुरूआत 1970 के दशक से हुई जब रिकॉर्ड की तकनीक में सुधार हुए जिसके परिणामस्वरूप सस्ती कैसेटों का व्यापक उत्पादन हुआ। अब संगीत का कैसेट के माध्यम से कई बार पुन: निर्माण किया जा सकता था जिस कारण संगीत लोगों को आसानी से उपलब्ध हुआ। 1980 के दशक में रिकॉर्ड तकनीक में और सुधार होने के कारण गुणवत्ता पर आधारित संगीत सस्ते में उपलब्ध होना संभव हुआ। साथ ही एक साथ ही संगीत की 'फोर-ट्रैक' रिकार्डिंग के तकनीकी विकास के कारण

घरों में संगीत रिकॉर्ड करना संभव हुआ। कैसेट संस्कृति के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के संगीत जैसे फिल्म संगीत, भक्ति संगीत, लोकप्रिय संगीत, क्षेत्रीय संगीत, गैर-फिल्मी संगीत आदि आसानी से उपलब्ध हुए। उदाहरण के लिए, फिल्म, गीत और भजन की कैसेटें काफी लोकप्रिय हैं।

पीटर मैनुअल भारत में कैसेट संस्कृति के प्रभाव की विवेचना करते हैं। अपनी कृति 'कैसेट कल्चर: पॉपुलर म्यूजिक एंड टेक्नॉलॉजी इन नॉर्थ इंडिया' में कहते हैं कि वहनीय कैसेट संस्कृति ने भारत की लोकप्रिय संस्कृति में क्रांतिकारी परिवर्तन किए। इसने न केवल कुछ संगीत संबंधी कंपनियों के एकाधिकार को तोड़ा परंतु साथ ही संपूर्ण भारत में अनेक प्रकार के संगीत के उत्पादन और उसके प्रचार प्रसार को भी बढ़ाया जिसमें मुख्यत: फिल्म और भक्ति संगीत शामिल है। कैसेट के माध्यम से संगीत को एक उत्पाद के रूप में निर्मित किया गया जिसने भारत के लोकप्रिय संगीत को अपार विविधता प्रदान की। पीटर मैनुअल ने संगीत के इस प्रकार के एक उत्पाद के रूप में निर्माण की समस्या को भी उजागर किया है। उनके अनुसार इसने समाज में विषमताओं और टकराव को भी जन्म दिया है जिसपर कुछ नियंत्रण आवश्यक है।

1.3.7 फिल्म संस्कृति

भारतीय फिल्म उद्योग संसार के सबसे पुराने फिल्म उद्योगों में से एक है। हलांकि भारत में फिल्मों का प्रथम प्रचार 1896 में 'द टाईम्स ऑफ इंडिया' समाचार पत्र द्वारा किया गया परंतु पहली हिंदी फिल्म राजा हरिश्चंद्र 1913 में दिखाई गई। 1931 में बनी आलम आरा पहली बोलने वाली फिल्म थी।

उसके उपरांत सिनेमा भारतीय संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गया है। भारत में फिल्में अनेक विषयों पर बनाई गई हैं। मिथक, व्यवसायी, ऐतिहासिक, कला विषयों पर मुख्य रूप से मनोरंजन के लिए बनाई जाती हैं। फिल्मों के कालाकारों के बड़े प्रशंसक होते हैं। वे समाज में 'फैशन ऑइकन' के रूप में जाने जाते है। फिल्मों ने समाज में व्याप्त विषमताओं को कम करने तथा समानता के प्रचार में अहम भूमिका निभाई है। दादा साहेब फाल्के भारतीय सिनेमा के जनक कहे जाते हैं। दादा साहेब के अलावा पी०सी० बरूआ, शांताराम, हिमांशु राय, राज कपूर, गुरू दत्त, मनमोहन देसाई, सुभाष घई, डैविड धवन, संजय लीला भंसाली कुछ प्रमुख नाम है जिन्होंने भारतीय सिनेमा को प्रगतिशील किया है। मनमोहन देसाई ने कहा था, "मैं चाहता हूँ कि लोग अपने दुख भूल जायें। मैं उन्हें सपनों की दुनिया में ले जाना चाहता हूँ जहाँ कोई गरीबी नहीं है, जहाँ कोई भिखारी नहीं है तथा जहाँ किस्मत मेहरबान है और ईश्वर अपने लोगों का ध्यान रखता है।"

आज फिल्म उद्योग अत्यंत व्यापक हो गया है। हॉलीवुड से प्रेरित नाम जैसे बॉलीवुड, टॉलीवुड, और कॉलीवुड भारतीय फिल्म उद्योग के विस्तार के परिचायक हैं। भारतीय फिल्में सांस्कृतिक एकीकरण का एक प्रभावशाली माध्यम भी साबित हुई हैं। उदाहरण के लिए, फिल्में क्षेत्र, भाषा और धर्म संबधी विभाजनों को तोड़ती हुई सब तक पहुँचती हैं, और इस प्रकार जनता में एक व्यापक अपील का स्तर प्राप्त कर लेती हैं।

1.3.8 टेलीविजन संस्कृति

टेलीविजन भारत में एक विशाल उद्योग है। यह मनोरंजन के सबसे लोकप्रिय स्रोतों में से एक है। हालांकि टेलीविजन मुख्य रूप से मनोरंजन का साधन है परंतु साथ ही सूचनाओं का एक स्रोत भी है। फिल्मों की अपेक्षा टेलीविजन का लोगों पर गहरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि यह घर का एक अभिन्न अंग

बन गया है। आज टेलीविजन लोगों के बैठक या शयनकक्ष तक पहुँच गया है। इस रूप में टेलीविजन एक प्रकार का मीडिया साम्राज्यवाद का भी साधन बन रहा है।

घर पर व्यक्ति टेलीविजन के माध्यम से निरंतर संसार के सपंर्क में रहता है क्योंकि इसके कार्यक्रम दिन-रात चलते रहते हैं। 'सेट टॉप बॉक्स' ने आज दर्शकों को यह स्वतंत्रता दे दी है कि वे क्या देखें और क्या नहीं। विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों ने लोगों को अत्यधिक प्रभावित किया है विशेष रूप से धारावाहिक और प्रतिदिन आने वाले 'सोप ओपेरा' ने दर्शकों को अपनी कहानी से बाँधे रखते हैं। कई टेलीविजन धारावाहिक लोगों को अनेक रूप में प्रभावित करते हैं।

टेलीविजन लोगों को न केवल अपने मित्रों, पड़ोस बल्कि पूरे संसार से जोड़ देते हैं। दर्शक उसी प्रकार की भावना महसूस करता है जैसा कहीं और का दर्शक उसी कार्यक्रम को देखकर करता है। उदाहरण के लिए, समाचार के चैनल न केवल पल-पल की जानकारी देते हैं बल्कि दर्शकों को समस्त संसार से भी जोड़े रखते हैं।

कई लोग टेलीविजन को बच्चों के ध्यानभंग का एक सशक्त माध्यम मानते हैं। यह कहा जाता है कि टेलीविजन उनके अध्ययन को प्रभावित करता है। परंतु आज के समय में यह लगभग असंभव हो गया है कि बच्चों को टेलीविजन देखने से रोका जा सके जब यह ज्ञात है कि आज टेलीविजन हर घर में मौजूद है। यह लोगों के दृष्टिकोण, जीवन मूल्य, रूचिओं आदि का निर्माण करता है जिनमें नौजवान एवं महिलाएँ शामिल हैं। इसने लोगों की जीवन शैली को भी उल्लेखनीय रूप से परिवर्तित करने का प्रयास किया है।

1.3.9 कॉर्पोरेट संस्कृति

कॉर्पोरेट संस्कृति से अभिप्राय ऐसे विश्वासों और व्यवहारों से है जो यह निर्धारित करते हैं कि कैसे किसी कंपनी के कर्मचारी और मैनेंजमेंट आपस में बातचीत करते हैं तथा व्यापार को किस प्रकार संभालते हैं। किसी कंपनी की कॉर्पोरेट संस्कृति उसके द्वारा निर्धारित वेशभूषा, कार्यप्रणाली, कार्य के घंटे, सकल उत्पाद, कर्मचारियों की नियुक्ति की प्रणाली और कार्यपद्धति से प्रस्तुत होती है। उदाहरण के लिए कई बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने 'इम्पलॉई-फ्रेंडली' कॉर्पोरेट संस्कृति के लिए जानी जाती हैं।

कॉर्पोरेट संस्कृति शब्द का प्रचलन 1980 के दशक से शुरू हुआ और 1990 के दशक में यह एक लोकप्रिय शब्द बन गया। इस काल में कॉर्पोरेट संस्कृति से अभिप्राय कंपनी की छवि से था जिसमें विश्वास, व्यवहार, कंपनी के मूल्य, मैनेजमेंट प्रणाली, कर्मचारियों के मध्य संपर्क और सामजस्य, कार्य शैली, दृष्टिकोण, कंपनी के ट्रेडमार्क, 'लोगो' आदि शामिल थे। आज की बड़ी कंपनियों ने अपने कॉर्पोरेट संस्कृति को और अधिक परिष्कृत कर दिया है जिसमें कंपनियों द्वारा कर्मचारियों को अधिक सुविधा उपलब्ध कराना, कार्यक्षेत्र में और स्वतंत्रता आदि शामिल है।

हार्वर्ड बिजनस रिव्यू ने कॉर्पोरेट संस्कृति की छह महत्त्वपूर्ण विशिष्टताओं को रेखांकित किया है। पहला है 'दूरदर्शिता'। किसी कंपनी की 'दूरदर्शिता' का अहसास उसके 'स्लोगन' से भी लगाया जा सकता है। दूसरा है 'मूल्य'। इसके अंतर्गत कंपनी के लक्ष्यों की पूर्ति संबंधित आवश्यक सोच और परिप्रेक्ष्य निहित होते हैं। तीसरा है 'परंपरा' जिसके अंतर्गत वे तरीक हैं जिनकी सहायता से कंपनी अपने निश्चित 'मूल्य' निर्धारित करती है। उदाहरण के लिए कई कंपनियाँ कर्मचारियों की कुशलता और दक्षता पर जोर देती है। चौथे स्थान पर 'लोग' आते हैं। इससे अभिप्राय कंपनी की नियुक्ति संबंधी नीतियों से है जिससे कंपनी की समस्त संस्कृति की झलक मिलती है। पाँचवें और छठे लक्षण क्रमशः 'सिद्धांत' और 'स्थान' हैं।

एक सशक्त सिद्धांत किसी भी कंपनी के विकास और छवि के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार से कंपनी का स्थान या स्थिति जैसे शहर में कंपनी का दफ्तर, ईमारत का नक्श आदि भी समकालीन कॉर्पोरेट संस्कृति के प्रभावशाली तत्त्व बन गए हैं।

1.3.10 दरबारी संस्कृति

भारत में दरबारी संस्कृति का इतिहास मौर्य साम्राज्य के काल से देखा जा सकता है। परंतु ग्रंथों में इसका स्पष्ट प्रस्तुतीकरण बाद के शासकों के काल से मिलता है। जैसे शक, कुषाण, सातवाहन, गुप्त शासक आदि। दाऊद अली ने अपनी रचना 'कोर्टली कल्चर एंड पोलिटिकल लाइफ इन अर्ली मिडीवल इंडिया' में गुप्त काल और उसके बाद के समय में विकसित हुई दरबारी संस्कृति का अध्ययन किया है। दाऊद अली के अनुसार शाही दरबार एक सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थान की भाँति कार्य करता है। गुप्त काल से विकसित हुई दरबारी संस्कृति कालांतर में भी स्थिर रही है।

मध्यकाल में दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य की स्थापना ने दरबारी संस्कृति को कई नई विशिष्टताओं से संपन्न किया। दरबारी संस्कृति दरबारी जीवन का प्रस्तुतीकरण करती है, जैसे, शिष्टाचार, आचार-विचार, सभ्याचार आदि। विद्वानों ने मुगल दरबार की दरबारी संस्कृति की प्रशंसा की है। इतिहासकार स्टीफन जी. ब्लेक और हरबंस मुखिया कहते हैं कि मुगल दरबार एक प्रकार से विश्व व्यवस्था का प्रतिरूप था तथा दरबार में राजकुमारों और कुलीनों का निर्धारित स्थान दरबार में राज्य की शक्ति और प्रभुता का प्रतीक था।

1.3.11 मॉल संस्कृति

आज के समय में तेजी से उदित होती संस्कृतियों में मॉल संस्कृति एक है। इस संस्कृति से अभिप्राय नियमित मॉल जाना, मनोरंजन करना तथा खरीद-फरोख्त से है। आज का युवा मॉल में जाना पसंद करता है जो अनेक गतिविधियों का केंद्र बनता जा रहा है। मॉल एक ऐसा स्थान है जहाँ लोग अनेक प्रकार की गतिविधियों में अपना पूरा दिन बिता सकते हैं। महानगरों में मॉल बड़ी तीव्रता से आनंद और मनोरंजन का लोकप्रिय स्थान बनते जा रहे हैं।

1.3.12 मीडिया और संस्कृति

मीडिया और संस्कृति में महत्त्वपूर्ण संबंध है। किसी संस्कृति के प्रचार-प्रसार निर्माण और लोकप्रियता में मीडिया की अहम भूमिका होती है। अनेक प्रकार के विज्ञापनों और प्रचार से मीडिया लोगों को किसी भी संस्कृति की ओर आकृष्ट कर सकता है। इस रूप में मीडिया प्रभावशाली है तथा सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। परंतु मीडिया के इस बढ़ते प्रभाव से भी सतर्क रहने की आवश्यकता है अन्यथा यह मीडिया साम्राज्यवाद में परिणत हो सकता है।

उदाहरण के लिए संसार पर अधिकतर वर्चस्व पश्चिमी मीडिया का रहा है। पश्चिमी मीडिया एक निश्चित प्रकार के उत्पादों और संस्कृति को बढ़ावा देता है जो अन्य देशों में प्रस्तुत किया जाता है। इसका परिणाम यह है कि इसका विश्व में प्रभाव बहुत बढ़ जाता है। पश्चिमी मीडिया के विश्व पर वर्चस्व का आंकलन इसी से लगाया जा सकता है कि उनके टेलीविज़न और रेडियो के कार्यक्रमों को सबसे अधिक धनराशि प्राप्त होती है। इसका कारण यह है कि उनके पास कई अपने संचार उपग्रह है जिसने इन देशों को अन्य देशों की तुलना में श्रेष्ठता प्रदान की है।

1.3.13 उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय संस्कृति में अनेक प्रकार की विविधताएँ हैं। उपरोक्त विवेचना संस्कृति की कुछ विविधताओं को उजागर करती है। यह विविधता भारत की विशालता और अपार विविधता को रेखांकित करती है जो न केवल भारत की एक विपुल सांस्कृतिक पूँजी है बल्कि इसकी सबसे बड़ी शक्ति भी है।

अभ्यास 6

(अ) निम्न के लिए 'सही' या 'गलत' बताइये-

(i) कबीलाई संस्कृति अनेक संस्कृति रूपों में एक प्रकार की संस्कृति है।

(ii) लोकप्रिय संस्कृति और लोक संस्कृति एक ही हैं।

(iii) कंपनी के विकास के लिए एक अच्छी कॉर्पोरेट संस्कृति आवश्यक है।

(iv) भारतीय फिल्म उद्योग संसार के सबसे पुराने फिल्म उद्योगों में से एक है।

(v) मीडिया संस्कृति को प्रभावित नहीं कर सकता।

(ब) लघु प्रश्न:

1. लोकप्रिय संस्कृति और उच्च संस्कृति के मध्य के महत्त्वपूर्ण अंतरों को उजागर कीजिए।
2. फिल्म और टेलीविज़न संस्कृति तथा लोगों पर इसके प्रभाव की विवेचना कीजिए।

संदर्भ सूची

- बी.पी. सिन्हा, इंडिया'ज कल्चर- द स्टेट, द आर्ट, एंड बियोंड, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 1998.
- बोरिस इरासोव और योगेंद्र सिंह, द सोशियोलॉजी ऑफ कल्चर, दिल्ली, 2006.
- दाऊद अली, कोर्टली कल्चर एंड पोलिटिकल लाइफ इन अर्ली मीडीवल इंडिया, केंब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस, 2004.
- जॉन स्टोरी, कल्चरल टयोरी एंड पापुलर कल्चर, पीअरसन लॉगमैन, नई दिल्ली, 1994.
- प्रमोद के नायर, ऐन इंट्रोडक्शन टू कल्चरल स्टडीज़ दिल्ली, 2008.
- पीटर बर्क, पापुलर कल्चर इन अर्ली मॉडर्न यूरोप, ऐशगेट पब्लीशिंग लिमिटेड, 2009.
- पीटर मैनुअल, कैसेट कल्चर पापुलर म्यूजिक एंड टेक्नॉलॉजी इन नार्थ- इंडिया, शिकागो प्रेस, 1993
- टोबी मिलर, ए कंपेनियन टू कल्चरल स्टडीज़, यू०एस०ऐ०, 2001, 2006

1.4 संस्कृति के सामाजिक तत्त्व (विशिष्ट उदाहरण)

संस्कृति का एक सामाजिक संदर्भ होता है। अन्य शब्दों में संस्कृति के सामाजिक तत्त्वों को विभिन्न क्षेत्रों में समकालीन विकास तथा सामाजिक वर्गीकरण, धार्मिक आस्थाएँ और विश्वास आदि के संबंध के रूप में देखा जा सकता है। इस भाग में हमने उदाहरण चुने हैं जो सांस्कृतिक गशीलता में व्याप्त सामाजिक संदर्भों को प्रस्तुत करेंगे। इसमें महाकाव्य चित्रकला, मंदिर सूफी संप्रदाय, फिल्म एवं खेल-कूद शामिल हैं जिनका समय प्राचीन से आधुनिक काल का है।

कोई भी महाकाव्य साहित्य सामान्यत: प्रारंभिक लिपिबद्ध या लिखे गए इतिहास से पहले के काल का प्रमाण देता है। महाकाव्य अनिवार्यत: किसी वीरगाथापरक आदर्श को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान करता है। महाकाव्य साहित्य मूलभूत रूप में मौखिक परंपरा का भाग है जिसका सृजन, संकलन एवं

मिलान कई सदियों में चारण अंशों से होता है। कालांतर में इसमें कई नये तथ्य और प्रकरण आदि भी जुड़ते चले जाते हैं। महाकाव्य की लोकप्रियता उस समाज विशेष के अनुसार परिवर्तित होती रहती है जिससे इसके (महाकाव्य के) विभिन्न प्रकरण खास बिन्दुओं पर जुड़े रहते हैं।

1.4.1 महाभारत

- महाकाव्य का आख्यानात्मक भाग कबीलाई व्यवस्था से राजतंत्रात्मक व्यवस्था में परिवर्तित या बदल रहे समाजों का अंकन करता प्रतीत होता है।
- इसके विपरीत उपदेशात्मक भाग एक उच्चतर स्तरीकृत समाज की व्याख्या करता है जिसमें वंशावली की तुलना में जातीय प्रकार्य के अधिक संदर्भ निरंतर मिलते हैं।
- महाभारत महाकाव्य लगभग संपूर्ण उत्तरी भारत के वर्गों और राज्यों को समाहित करता है, पर आख्यान का मुख्य केंद्र बिन्दु ऊपरी दोआब के कुरु और पंचाल क्षेत्र हैं।
- इस क्षेत्र की प्रभावी पुरातात्विक संस्कृति चित्रित धूसर मृदभांड (च्पदजमक ळतमल ूंतए च्ळॅ) है बाद में जिसका स्थान उत्तरी काला पॉलिशदार मृदभांड (छवतजीमतद ठसंबा च्वसपेीमक ॅंतमए छठच्) ने ले लिया।
- महाकाव्य में दी गई वंशावली वंश विन्यास या वंश संरचना की श्रृंखला को दर्शाती है।
- इस महाकाव्य की मुख्य घटनाएँ सगोत्र भाइयों के मध्य राजनीतिक उत्तराधिकार की प्राप्ति हेतु होने वाले संघर्ष के इर्द-गिर्द घूमती हैं। यह दर्शाता है कि ज्येष्ठ पुत्र का राजगद्दी पर अधिकार अभी भी पूर्णतः स्थापित नहीं हुआ था।
- महाकाव्य में दान देने का पहला बड़ा अवसर राजसूय यज्ञ के रूप में आया है जो युधिष्ठिर द्वारा संपन्न कराया गया। इसका वर्णन महाकाव्य के सभापर्व में है।
- इस महाकाव्य में दासों का भी वर्णन है। दास सामान्यतः युद्धबंदी, दास माता के पुत्र या जुए में हारे हुए लोगों को बनाया जाता था।
- वर्णनात्मक भाग में दर्शाये गये महाकाव्य समाज में संपत्ति-संग्रह की प्रवृत्ति कम है और इसमें बार-बार संपत्ति के वितरण पर जोर दिया गया है।
- भगवद्गीता युद्धभूमि में दो क्षत्रियों के मध्य संवाद है जिसमें एक योद्धा कृष्ण हैं जो स्वयं को ईश्वर के अवतार रूप में प्रस्तुत करते हुए दूसरे योद्धा को युद्धभूमि में पुनः लौटने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।
- इस महाकाव्य का एक अन्य प्रकरण अर्जुन-सुभद्रा विवाह है। यह एक सगोत्रीय विवाह है। जहाँ यह विवाह दक्षिण के प्रारूपों में उत्साहपूर्वक वहीं उत्तर के प्रारूपों में यह एक समस्या के रूप में वर्णित है।
- जुए का दृश्य महाभारत के अत्यंत महत्त्वपूर्ण दृश्यों में से एक है। इसके समापन पर पांडव अपना राज्य हार जाते हैं। द्रौपदी अपमानित तथा उत्पीड़ित होती है और कौरव-पांडवों के मध्य युद्ध अवश्यंभावी हो जाता है।
- कुंती, माद्री और गांधारी की स्थितियां महाकाव्य-युग के दौरान बांझपन की विकरालता से लोगों के संघर्ष के तरीके का विस्तृत आख्यान है। इस मुद्दे पर विचारों की विविधता तब भी संभव थी और आज भी देखी जा सकती है।
- महाभारत में चुनौती और इसके प्रत्युत्तर के कई उदाहरण हैं। समस्या राजनीतिक तथा याज्ञिकी हिंसा की है जिस पर अनेक प्रकार के हल प्रस्तुत किए गये हैं जो मीमांसा में वर्णित याज्ञिकी हिंसा को अनुचित

न मानने से लेकर सांख्ययोग दर्शन में गृहस्थ के लिए बताये गए केवल अहिंसक (शाकाहारी) यज्ञ तथा भगवद्गीता के कर्मयोग दर्शन तक शामिल हैं। चुनौतियों का सामना करने के लिए परंपरा में उपलब्ध साधन समान महत्व के हैं। मौखिक विवाद लेखकों को नये प्रश्नों को प्रस्तुत करने का अवसर देता है पर साथ ही उन्हें पुराने यज्ञ संबंधी दृष्टांतों की सीमा में भी रखे रहता है।

- लोक-आख्यानों और महाभारत के जीवंत परंपराओं के संप्रदाय का अध्ययन महाकाव्य और भारत के विभिन्न भागों की ग्रामीण परंपराओं के बीच के संबंधों को नये रूप में प्रकट करता है।

1.4.2 अजंता के अतीत का बोध

कला-रूप किसी भी संस्कृति के महत्त्वपूर्ण तत्त्व होते हैं। जेम्स फर्गयूसन, जेम्स वर्गीस, जॉन मार्शल तथा अन्य लेखकों के समय से भारतीय कला के इतिहास ने कई परिवर्तन देखे हैं जिसमें अधिक जानकारी का उपलब्ध होना, नई खोजें और बहु-आयामी बोध तथा विषयों की समझ (संप्रत्ययीकरण) शामिल हैं। यहाँ हम अजंता कला के दृष्टव्य और लिखित रचना पर प्रकाश डालेंगे जो बॉम्बे के उत्तर-पूर्व में दक्कन के पठारों में स्थित है। इसके द्वारा हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि किस प्रकार सामाजिक तत्त्वों का अवलोकन अतीत के अर्थों को प्रस्तुत करता है। अजंता की खोज 1819 में एक ब्रिटिश अधिकारी द्वारा की गई। यहाँ की स्थापत्य-कला, मूर्ति-कला और चित्रकला विभिन्न चरणों की है जिसका काल ईसा पूर्व पहली शताब्दी (सातवाहन काल) से लेकर ईस्वी पांचवीं शताब्दी (वाकाटक-गुप्त काल) तक है।

- अजंता की चित्रकला एक सामाजिक संदर्भ में उत्पन्न हुई। हर चरण की चित्रकला की बनावट में एकरूपता देखने को मिलती है। अन्य शब्दों में, यह व्यापारियों की गिल्ड परंपरा को प्रदर्शित करता है जिन्होंने कार्य की एक शैली को प्रोत्साहन दिया। पशुओं और पौधों का चित्रांकन गिल्ड कलाकारों की कृति थी जो सन्यासी या वैरागी नहीं थे। अतः यह चित्रकला न केवल धार्मिक कला है बल्कि लोकप्रिय कला के रूप की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति भी है।

अजंता गुफा नं. 17: महायान चरण

(स्रोत: http://asi.nic.in/images/wh_ajanta/pages/023.html)

- अजंता चित्रकला रेखाओं के लचीलेपन तथा तरलता की विशिष्ट शैली को प्रदर्शित करती है परन्तु साथ ही यह बादामी और बाग (Badami and Bagh) के प्रभाव को दिखाती है।

- बाद की लोकप्रिय कला पर भी अजंता शैली की गहरी छाप पड़ी। उदाहरण के लिए, 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक काल में यह बंगाल में भारतीय राष्ट्रीय कला के पुनरुत्थान में शामिल कलाकारों की प्रेरणास्रोत बन गई। इस समय से अजंता का अतीत भारत के सांस्कृतिक राजनीतिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण प्रतीकात्मक प्रतिमान के रूप में उभरा है। 1950 के दशक के आरंभ में इसे अंतर्राष्ट्रीय धरोहर के रूप में स्वीकार किया गया तथा चित्रकला और अन्य अवशेषों को (UNESCO) यूनेस्को की सहायता से संरक्षित किया गया। अजंता के अवशेषों का लोकप्रिय या जनसंस्कृति में प्रवेश पोस्टकार्ड, पोस्टर तथा होटलों की साज-सज्जा आदि रूपों में देखा जा सकता है।
- अजंता की विविध शैलियाँ निरंतरता और परिवतर्न के साथ-साथ इतिहास की विभिन्न अवस्थाओं के दौरान मौजूद विभिन्न संस्कृतियों के साथ संपर्क को भी दर्शाती हैं। विभिन्न चित्रकला केवल दक्कन के समकालीन समाज और जीवन को ही नहीं बल्कि भारत के अन्य क्षेत्रों के समाज और जीवन का भी चित्रण प्रस्तुत करती हैं। उदाहरण के लिए, जातक कथाओं के दृश्य (जो उत्तर भारत की परिस्थितियों का चित्रण करते हैं) उत्तर भारतीय जीवन को प्रकट करते हैं। इसका अर्थ यह है कि पूरे भारत से कलाकार अजंता में कार्य करने आये।
- अजंता के विकास में राजकीय संरक्षण ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संदर्भ में अवशेष यह दर्शाते हैं कि राजकीय संरक्षण के प्रेरक तत्त्व धार्मिक नहीं राजनीतिक थे। अतः राजनीतिक परिवर्तन से संरक्षण का प्रभावित होना स्वाभाविक था।
- अजंता के चित्रफलक (Panels) सातवाहनों तथा वाकाटक-गुप्त काल के बीच की भौतिक संस्कृतियों की विषमता प्रस्तुत करते हैं। इन भिन्नताओं या रूपातरंणों को भिन्न ऐतिहासिक अवस्थाओं के पुरुषों एवं महिलाओं के पहनावे तथा आभूषण की पद्धतियों में सरलता से देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए, सातवाहन काल में प्रयुक्त होने वाली भारी पायल का स्थान वाकाटक-गुप्त काल में हल्की पायलों ने ले लिया। इसी प्रकार, सातवाहन काल में पुरुष अपने सिर को कई तहों में लपेटी पगड़ी से ढंकते थे लेकिन बाद के काल में इस साधारण पगड़ी का स्थान राजाओं, राजकुमारों द्वारा पहने जाने वाले चमकदार मणियों से अत्यंत सज्जित मुकुट ने ले लिया। हालांकि आम आदमी लंबे, घुंघराले या छल्लेदार बाल रखते थे।
- वस्त्रों के रंगों में भी परिवर्तन आया। सातवाहन काल में वस्त्र साधारणतः सफेद हुआ करते थे वहीं वाकाटक-गुप्त काल में ये रंगीन होते गए।
- जीवन-शैली में परिवर्तन अन्य वस्तुओं के प्रयोग भी दृष्टिगोचर होता है। उदाहरण के लिए, आरंभिक चरण में आम आदमी साधारण फर्नीचर का प्रयोग करता था और शाही व्यक्ति रोमन शासकों की तर्ज पर बिना पीठ वाले, किनारे पर बांहों से युक्त आसन का प्रयोग करते थे। गुप्त काल के समय में आसन पीठयुक्त लेकिन किनारे बांहों के बगैर बनाये जाने लगे। इसका कारण यह था कि इसने भारतीय शैली में पालथी लगाकर बैठने के प्रचलन को बढ़ाया। राजसी व्यक्ति अब चमकदार तथा अलंकृत सिंहासन का प्रयोग करते थे जिसमें पशुरूपी पाए और ऊँची पीठ होती थी।
- समय के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्र भी विकसित तथा प्रभावकारी होते गए। सातवाहन काल का धनुष एक ही घुमाव वाला साधारण किस्म का था। पर बाद के काल में, धनुष लकड़ी या सींग के दो टुकड़ों को धातु की प्लेट से जोड़कर बनाया जाने लगा। आरंभिक काल में तलवारें अत्यंत दुर्लभ थी पर गुप्त काल

में इनका व्यापक स्तर पर प्रयोग होने लगा। इसी प्रकार, दो घोड़ों वाले हल्के रथ का स्थान चार घोड़ों वाले वाहन ने ले लिया जिसमें शाही लोग बग्घी का प्रयोग करते थे।

- रहने वाले स्थानों की अभिव्यक्ति में भी अंतर दिखता है। गुफा संख्या 10 में सातवाहन विहार में एक खुला प्रांगण तथा इसके चारों तरफ कमरे बने हों। यह योजना पश्चिमी भारत में दूसरी शताब्दी ई०पू० से दूसरी शताब्दी ईस्वी मध्य तक चट्टानों को काटकर बनाए गए विहारों से मिलती है। वहीं बाद के विहारों में बरामदे के साथ कमरों का समूह मिलता है।
- अजंता की चित्रकला नि:संदेह कलाकारों द्वारा ग्रहीत समकालीन जीवन को चित्रित करती है। इसे बुद्ध के चित्रांकन एवं उनके जीवन से जुड़ी कहानियों से स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। संभवत: वे छठी शताब्दी ई०पू० के जीवन का प्रस्तुतिकरण नहीं कर पाये। उदाहरणार्थ, बुद्ध को सदैव वस्त्र पहने दिखाया गया है। गुफा संख्या 17 में बुद्ध संन्यासी वस्त्र में हैं जबकि उनके पुत्र राहुल ने कटिवस्त्र तथा आस्तीनयुक्त अंगरखा पहना हुआ है। यह संकेत करता है कि भारतीय कलाकार अतीत की जानकारियों से संबद्ध नहीं थे और अतीत की घटनाओं का चित्रण करते-करते उन्होंने स्वत: समकालीन जीवन का चित्रण कर दिया। लौकिक विषयों पर यह तथ्य सत्य है परन्तु धार्मिक विषयों में वे परंपराओं तथा सुनिश्चित प्रथाओं से निर्देशित होते थे। धार्मिक विषयों के मामले में कलाकारों की रचनात्मक स्वतंत्रता को दान कर्ताओं एवं धार्मिक शास्त्रों ने सीमित कर दिया था।

इस प्रकार अजंता की चित्रकला विगत काल या अतीत तथा समकालीन वर्तमान के मिश्रण का प्रतीक है जिसमें दोनों तत्त्व एक साथ विद्यमान हैं।

गुफा नं. 17: भगवान बुद्ध कपिलवस्तु में राहुल को भिक्षा पात्र देते हुए, महायान काल
(स्रोत: http://asi.nic.in/images/wh_ajanta/pages/026.html)

1.4.3 नटराज संप्रदाय और चिदंबरम् मंदिर के सामाजिक तत्त्व

- पूजा के स्थान के रूप में मंदिर को कई शब्दों में व्यक्त किया गया है जैसे देवगृहम्, देवालय तथा मंदिरम्। पहले मंदिरों को भव्य स्मारक के रूप में ही देखा जाता था। पर मंदिर की पवित्रता और संरचनात्मक महत्वत्ता को केवल वास्तुकला रूप में ही नहीं आंका जाना चाहिए। मंदिर को एक स्मारक के रूप में अलग से नहीं देखा जाना चाहिए।
- मंदिर को अध्ययन के एक विषय के रूप में भी देखा जा सकता है। ये समाज और संस्कृति की अभिव्यक्तियाँ हैं। इन्होंने समाज के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। मंदिरों के अभिलेख दर्शकों को अपने विविध महत्व की सूचना देते हैं। वंश-परंपरागत शासकों द्वारा मंदिरों को दिया गया संरक्षण ऐसे मंदिरों और राजाओं के बीच विशेष संबंध स्थापित करने में सहायक रहा है। मंदिर को प्राप्त होने वाली वृत्तियाँ तथा दान किसी समाज के विभिन्न समूहों की उपस्थिति को प्रकट करते हैं। साथ ही, ये मंदिर सामाजिक संघर्षों और समूहों के वर्चस्व को भी प्रकट करते हैं। इस प्रकार मंदिर समाज के महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के सबसे प्रखार उपलब्ध साक्ष्य हैं तथा वे परिवर्तनों के कारणों का उत्तर भी प्रदान करते हैं।
- समाज को बदलने में मंदिर की भूमिका को चिदंबरम मंदिर और नटराज संप्रदाय के एक विशेष अध्ययन द्वारा इस भाग में प्रस्तुत किया गया है। चिदंबरम मुख्य रूप से मंदिरों का शहर है और एक प्रसिद्ध शैव संप्रदाय का केंद्र है। भारत के तीर्थस्थल कई दंत कथाओं और श्लोकों का बखान करते हैं जो 'महात्म्यम्' के नाम से जानी जाती है। इनकी विशेषता यह है कि ये चिदंबरम मंदिर और नटराज संप्रदाय के उद्भव की जानकारी प्रदान करते हैं।

  जब दंत कथाओं की अर्थपूर्ण व्याख्या की जाती है तब वे सांस्कृतिक परंपराओं को समझने में सहायक होती हैं। चिदंबरम मंदिर और नटराज संप्रदाय के संदर्भ में दंत कथाओं की संख्या तब से बढ़ने लगी जब चोल राज्य का उत्थान हुआ। चोल शासकों ने चिदंबरम मंदिर को संरक्षण प्रदान कर अपनी सत्ता को वैधानिकता प्रदान की। नटराज संप्रदाय को संरक्षण चोल साम्राज्य में राजशाही विचारों में हो रहे परिवर्तन को प्रकट करता है। इस काल में परिवर्तन राजसी लिंग-साधना से अखिल भारतीय सुसंस्कृत ईश्वर की स्तुति की ओर होने लगा जिसने चोल शासकों की सत्ता को और विस्तृत वैधता प्रदान की।

  चिदंबरम मंदिर में चोल राजाओं और भक्तों के लिए 'आनंद तांडव' नृत्य का प्रस्तुतीकरण समाज में बढ़ रही भक्ति की महत्वत्ता को दर्शाता है। भक्ति आंदोलन की सहायता से निम्न वर्ग ने सनातनी ब्राह्मण प्रभुत्व को नकार दिया। एक किंवदंती के अनुसार शिव (पितृसत्तात्मक समाज के प्रतीक) तथा इनकी पत्नी काली (मातृसत्तात्मक समाज की प्रतीक) के बीच विवाद और अंततः काली की हार, मातृसत्ता के पतन और पितृसत्ता के वर्चस्व के रूप में देखी जा सकती है।
- चिदंबरम की मंदिर परंपरा दर्शाती है कि सभी चोल राजा भगवान नटराज के भक्त थे जिन्होंने चिदंबरम से गहरा रिश्ता बनाए रखा। चोल शासकों के उपरांत पांडय राजाओं ने चिदंबरम की उपासना पद्धति में ऐसी केंद्रीय भूमिका निभाई जिसे पल्लव या चोल शासक इस स्थान से जुड़े रहने के बावजूद नहीं निभा पाए थे। 14वीं शताब्दी से यहाँ पुरोहित की शक्ति का उत्थान हुआ और चिदंबरम के राजनीतिक संबंध के प्रभावों में कमी आई। चिदंबरम की मंदिर परंपरा दर्शाती है कि किस प्रकार परंपरा निरंतर जीवित रही और राजनैतिक शास्त्रियों ने परिवर्तन के लिए आधार प्रदान किया।

- मंदिर के अभिलेख विभिन्न प्रकार के दानकर्त्ताओं के बारे में बताते हैं जिन्होंने मंदिर को उदार रूप से दान दिया और जिसने उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा को बढ़ा या। 12वीं शताब्दी के दानदाता राज परिवार के सदस्य और स्थानीय सामंत थे जो भूमि और प्रतिष्ठा दोनों रूपों में शक्तिशाली थे। 13वीं शताब्दी में सामाजिक संतुलन में बदलाव आया। इस काल में नये प्रकार के दानदाता प्रकाश में आये जैसे 'सेट्टी' जिनका प्रथम बार दानकर्ता के रूप में आविर्भाव हुआ। 14वीं शताब्दी के अभिलेख फिर से राज परिवारों और राज्याधिकारियों द्वारा मंदिरों को दान देने की बढ़ती प्रवृत्ति को दिखाते हैं।

चिदंबरम के मंदिरों ने एक सांस्थानिक आधार प्रदान किया जिसके इर्द-गिर्द समाज आत्मबोध की अनुभूति और सामाजिक पहचान को पुनर्निमित कर सकता था। मंदिर और इससे जुड़ी गतिविधियाँ महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि ये किसी भी पवित्र स्थान के सामाजिक, सांस्कृतिक और धामिर्क आयामों के निर्माण में सहायक हैं। बर्टन स्टीन के शब्दों में मंदिर किसी समाज में 'अंत:क्रिया और आदान-प्रदान' का मंच है।

1.4.4 गिसु दराज़ का संप्रदाय

गुलबर्ग में स्थित प्रसिद्ध चिश्ती संत गिसू दराज़ की दरगाह को दक्कन के मुस्लिम समुदाय में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उनकी ख़ानकाह तथा कब्र, सांस्कृतिक इमारत के रूप में महत्त्वपूर्ण सामाजिक प्रभाव की रही है। इसने न केवल दक्कन के लोगों के मानस पटल पर बल्कि इसके बाहर भी प्रभाव स्थापित किया। समाज के सभी वर्गों- हिन्दू-मुस्लिम, अमीर-ग़रीब, कमज़ोर-बलवान द्वारा समान रूप से सम्मानित और इस प्रकार समाज की संकीर्णता-कट्टरता के सभी रूपों से ऊपर उठकर, यह इमारत दक्कन के राजनीतिक- अध्यात्मिक तथा सामाजिक जीवन में ऊँची या उदत्त अवस्था प्राप्त करने वाले गिसू दराज़ के उत्थान का साक्ष्य बनी हुई है।

गिसू दराज़ संप्रदाय का निर्माण एवं इसका अविनाशीकरण

- दक्कन के आध्यात्मिक तथा सांसारिक क्षेत्रों में गिसू को एक बाहरी व्यक्ति के रूप में देखा जा सकता था। परन्तु निज़ामुद्दीन औलिया और नसीर-अल दीन महमूद के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी के रूप में उनकी प्रतिष्ठा तथा चार दशकों तक दिल्ली के एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नेता जैसी सेवा ने उन्हें बहुत गहरी लोकप्रियता दी। उनकी प्रसिद्धि उनके साथ-साथ दिल्ली से दौलताबाद तक पहुँची तथा उनके द्वारा बहमनी राज्य में निवास ग्रहण करने की संभावना ने शासक वर्ग (जिसमें सुल्तान भी शामिल है) और साधारण लोगों दोनों में उत्तेजना उत्पन्न कर दी थी। इस प्रकार गिसू दराज़ को दक्कन में बाहरी व्यक्ति के रूप में नहीं देखा गया।

- गुलबर्ग में उनकी ख़ानकाह ने दैनिक रूप से आयोजित होने वाली धार्मिक- आध्यात्मिक गतिविधियों के माध्यम से तत्कालीन दक्कनी लोगों की सोच पर गहरे प्रभाव छोड़े। गिसू के अध्यात्मिक उपदेशों और ख़ानकाह के संगीत-सत्रों ने न केवल ऐसे लोगों को आकर्षित किया जो पूर्ण रूप से आध्यात्मिकता में लीन रहना चाहते थे बल्कि उन श्रद्धालुओं को भी आकर्षित किया जो सांसारिक जरूरतों की पूर्ति के लिए गिसू से आर्शीवाद लेने आते थे।

- गिसू और उनकी ख़ानकाह को जो राजकीय मान्यता तथा प्रशंसा मिली वह भी गिसू दराज संप्रदाय को मजबूत बनाने में सहायक हुई। एक हिंन्दू-मुस्लिम राज्य के रूप में फिरोज़ (1397-1422) के शासनकाल में बहमनी राज्य अपने राजनैतिक और सांस्कृतिक उत्थान पर था। इस प्रकार, गिसू का इस राज्य से संबंध उनके तीव्र उत्थान और प्रतिष्ठा प्राप्ति का एक कारक सिद्ध हुआ।

- ख़ानकाह ने अर्द्ध-राजनीतिक भूमिका भी प्राप्त कर ली थी। गिसू गुलबर्ग पर अध्यात्मिक प्रभुत्व रखते थे। बहमनी शासक फ़िरोज़ स्वभावतः अपने अधीन शासित क्षेत्र एवं लोगों पर वैध अधिकार के दावों को मजबूत करने के लिए संत गिसू के आर्शीवाद की कामना करते थे। तैमूर द्वारा दिल्ली के ध्वंस के उपरांत फिरोज गुलबर्ग को भारत की प्रांतीय राजधानियों में सबसेशानदार और दिल्ली के पुराने गौरव का सच्चा उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे। गिसू दराज़ में उन्हें भारत के अत्यंत विशिष्ट सूफी सिलसिला का अध्यात्मिक उत्तराधिकारी और एक प्रतिष्ठित विद्वान मिला, जिसने यदि उनकी दरबार की शोभा बढ़ाई तो उसकी राजधानी हाल ही में नष्ट हुई दिल्ली की विरासत की सच्ची वारिस बन जायेगी।

- गिसू ने अपने संप्रदाय को अमर बनाने में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इसके लिए उन्होंने अध्यात्मिक उत्तराधिकार के पारंपरिक नियमों से हटकर कार्य किया। उनकी नियुक्ति उनके सूफी गुरु नसीर-अल-दीन महमूद ने की थी। पर उन्होंने अपने एक पुत्र, सैय्यद असगर, को अध्यात्मिक उत्तराधिकारी बनाया और इस प्रकार उत्तराधिकारी की नियुक्ति के नियमों को बदल कर वंशानुगत कर दिया। स्वभाविक रूप से उन्होंने स्वयं को एक संप्रदाय में रूपांतरित कर लिया।

- बहमनी सुल्तान अहमद ने भी इस संप्रदाय को चिरकालिक बनाने में योगदान दिया। उन्होंने गिसू का शानदार मकबरा बनवाया जहाँ बड़ी संख्या में लोगों का प्रतिदिन आगमन होने लगा और इस प्रकार शीघ्र ही समाधि एक उपासना स्थल में परिवर्तित होती चली गई। सुल्तान ने गिसू के उत्तराधिकारियों को उदारता से भूमि अनुदान में दी जिससे वे स्वयं और मज़ार को दुरुस्त रख सकें। इसने संप्रदाय को आर्थिक मजबूती प्रदान की।

- यद्यपि गिसू दराज़ से पहले कुछ सूफी संत जैसे बुरहान-अल-दीन ग़रीब, शेख जैन अल-दीन शिराज़ी, शेख सिराज अली-दीन जुनैदी और अन्य दक्कन आये थे, पर गिसू ने हिंद-मुस्लिम समाज और राजनीति को सर्वाधिक स्थिरता और स्थानीयता प्रदान की। उन्होंने अपने कार्यों से दक्कन जो अब तक लूटपाट और डकैती ग्रस्त क्षेत्र माना जाता था (जैसा ख़लजी और आरंभिक तुगलक सुल्तानों ने देखा था) को एक वैधानिक रूप से अक्षत क्षेत्र में रूपांतरित किया।

- प्रसिद्ध दक्कनी इतिहासकार मोहम्मद कासिम फरिश्ता (मृत्यु 1611) के काल तक गिसू दराज़ का संप्रदाय मजबूती से स्थापित हो चुका था। फरिश्ता अपनी रचना 'तारीख-ए-फरिश्ता' में लिखता है कि एक दक्कनी व्यक्ति से पूंछे जाने पर कि वह किसे महान समझता है- पैगम्बर मोहम्मद को या सैय्यदों को, इस पर उस व्यक्ति का उत्तर था कि पैगम्बर निःसंदेह एक महान व्यक्ति थे, पर सैय्यद मोहम्मद गिसू दराज़ का संप्रदाय कहीं अधिक श्रेष्ठ था। इस उद्धरण से यह स्पष्ट होता है कि इस

काल तक दक्कन में एक बाहरी व्यक्ति की स्थानीयता और उनके संप्रदाय के अविनाशीकरण की प्रक्रिया पूर्ण हो चुकी थी।

1.4.5 'सांस्कृतिक वस्तु' के रूप में क्रिकेट

भारत जैसे देश में जहाँ भौतिक और मनोवैज्ञानिक विभाजन मौजूद है वहाँ क्रिकेट की एकीकरण की भूमिका का पर्याप्त अध्ययन नहीं हुआ है। आरंभिक राजनीतिक समायोजन का पतन सामाजिक तनावों तथा सदियों तक सत्ता-संरचना के बाहर रहे वर्गों की बढ़ती महत्वाकांक्षाओं में झलकता है। आज के युग में आम-सहमति वाली राजनीति का स्थान अस्मिता की राजनीति ने ले लिया है। अत: आज निम्न वर्ग के लोग अपनी दावेदारी को सशक्त रूप में स्थापित करते दिखते हैं। 21वीं सदी के आरंभ में भारत को मुख्यत: एकीकरण के प्रतीक की तलाश है। क्रिकेट इस प्रकार के भारतीय एकीकरण का एक तत्त्व है।

- भारत के क्रिकेट प्रेमियों के लिए ईशांत शर्मा और ज़हीर ख़ान दुनिया में विपक्षी टीम के लिए अपनी गेंदबाज़ी द्वारा मौत का परवाना देने वाली महाबली हैं।

- क्रिकेट का भारत में वही स्थान है जो फुटबाल का लैटिन अमेरिका में दीर्घकाल से रहा है। ऐसे समाज में जो ख़राब प्रशासन (कुशासन), भ्रष्टाचार तथा बेपनाह कुंठा से ग्रस्त है वहाँ क्रिकेट का खेल ऐसे संसार में ले जाता है जहाँ पूर्णता संभव होती दिखती है। टीम की जीत में एक प्रशंसक उस सफलता का अनुभव करता है जो उसे हमेशा छलती रही है। आज के समय में क्रिकेट खिलाड़ियों ने बीते काल के बालीवुड के नायकों का स्थान ले लिया है।

- ऐसे विद्वान जो क्रिकेट के व्यापक या विस्तृत अर्थ पर शोध कर रहे हैं उनके अनुसार 1993 में ईडन गार्डन में मोहम्मद अजहरुद्दीन द्वारा बनाये गये 182 रनों को खेल के सामाजिक इतिहास का महत्त्वपूर्ण अध्याय मानते हैं। इंग्लैंड के खिलाफ कलकत्ता (कोलकाता) टेस्ट में विजय इस घटना का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है।

- इंग्लैंड के खिलाफ ब्रायन लारा के 375 रन ऐसी स्थिति में आये हैं जब कैरिबियाई लोगों में सांस्कृतिक रूझानों को लेकर सामाजिक विवाद छिड़ा हुआ है जिसके एक छोर पर ग्रेट ब्रिटेन और दूसरे छोर पर अमेरिका है। लारा ने अपनी विलक्षण प्रतिभा द्वारा कैरिबियाई द्वीप के इंग्लैंड से पुराने संबंधों को प्रस्तुत किया।

- क्रिकेट ने समाज के सभी वर्ग के लोगों को आत्मसात किया है तथा यह उनकी आशाओं और महत्वाकांक्षा को प्रतिबिंबित करता है। यह क्रिकेट ही है जिसने सचिन तेंदुलकर (जो मध्य-वर्ग ब्राह्मण परिवार) और विनोद कांबली (भेंडी बाजार के एक दलित) को साथ-साथ प्रोत्साहित किया। और यह विदित है कि दोनों ने ही राष्ट्र की भावनाओं को ग्रहण किया और लोक-नायक बन गए।

1.4.6 उपसंहार

हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक रूपों में हमारी परंपराओं के तत्त्व शामिल होते हैं। संस्कृति के विविध पहलुओं को समझने हेतु इसे विभिन्न परिप्रेक्ष्यों से जानना आवश्यक है। यह तत्कालीन सांस्कृतिक परंपराओं और विश्वासों एवं इसके विभिन्न रूपों में प्रस्तुतीकरण को समझने में सहायक है।

'लगान' फिल्म का अध्ययन

बीसवीं शताब्दी उसी तरह चलचित्र की शताब्दी रही है जिस तरह उन्नीसवीं शताब्दी स्थिर चित्र की। फिल्म के विशिष्ट लक्षण गति (Motion) और भाव (Emotion) हैं। अमेरिकी फिल्मकारों ने नए माध्यम के मुख्य गुण को पहचानकर इसका उपनाम 'दू मूवीज' रखा जबकि ब्रिटेन के फिल्मकारों ने इसे 'द फ्लिक्स' या 'पिक्चर्स' कहा। फिल्म अध्ययन का विकास अंग्रेज़ी साहित्य से और सिनेमा इतिहास का विकास इतिहास से हुआ है। वृहत संदर्भ में दोनों ही क्षेत्र सांस्कृतिक इतिहास के अंतगर्त आते हैं। फिल्मों को तार्किक तौर पर सांस्कृतिक वस्तु के रूप में लिया जा सकता है। 'लगान' वस्तुतः किसान-नायक पर आधारित फिल्म है। इस फिल्म में निम्नलिखित सामाजिक तत्त्व दृष्टिगोचर होते हैं।

- चंपानेर की टीम 'लघु भारत' का प्रतिनिधित्व करती है। इसमें हिंदू-मुस्लिम-सिख के साथ विभिन्न व्यवसायों, एक दलित सहित विभिन्न सामाजिक समहू के लोग हैं।
- क्रिकेट मैच की रचना बड़ी सावधानी से की गई है। 11 वर्ष से अधिक का लड़का टीपू और प्रशिक्षक (कोच) एजिलाबेथ जीत में योगदान देते हैं। ऐलिजाबेथ की उपस्थिति ईसाई तत्त्व को इस क्रिकेट टीम में समाहित करती है।
- तीन खिलाड़ियों के प्रदर्शन, जिसने मैच की दिशा बदल दी, उसमें एक लेग-स्पिनर की हैट्रिक, घायल बल्लेबाज की बेहतरीन पारी और कप्तान का शतक जिसमें आखिरी गेंद पर छकका शामिल है। इस प्रदर्शन में योगदान अपंग-दलित कचरा, मुसलमान इस्माइल तथा किसान नायक भुवन का है।
- कचरा की अपंगता को उसकी सामाजिक श्रेणी के भौतिक प्रतीक के रूप में देखा जाना चाहिए। कचरा, जो एक दलित है, दो प्रकार की अपंगता का शिकार है- शारीरिक तथा सामाजिक।
- इस फिल्म द्वारा औपनिवेशिक शोषकों के खिलाफ संघर्ष को अहिंसात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है।
- एक संकीर्ण राष्ट्रवादी के रूप में राजा का चित्रण गांधी के इस विचार को दर्शाता है कि राष्ट्रीय आंदोलन को भारतीय राजाओं-रजवाड़ों के राज्यों में नहीं फैलाया जाना चाहिए।
- इस फिल्म द्वारा शोषकों के विरूद्ध शोषित लोगों की वर्गीय एकता को चित्रित किया गया है।

अभ्यास-7

(अ) संक्षिप्त टिप्पणी:

1. अजंता चित्रकला
2. गेसुदराज का संप्रदाय
3. सांस्कृतिक वस्तु के रूप में क्रिकेट

1.5 समापन

उपरोक्त विवेचना से हम निम्न निष्कर्ष पर पहुँचते हैं:

- संस्कृति एक जटिल व्यवस्था है जिसमें ज्ञान, विश्वास, नैतिकता, परंपराएँ आदि शामिल हैं।
- सांस्कृतिक बहुलता आगे भी स्थापित रहेंगी एवं किसी भी स्थिति में इसका दमन नहीं होना चाहिए।
- अनेकता में एकता भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है।
- हाल के वैश्विक परिवर्तनों ने संस्कृतियों के मध्य अधिक संपर्क स्थापित किया है जिसके परिणामस्वरूप नये रूपों का आविर्भाव हुआ है।

उत्तर:

अभ्यास-1

(अ) (i) गलत (ii) सही (iii) सही (iv) सही (v) सही

(ब) (iv)

(स) (iii)

(ड) लघु प्रश्न:

1. उप-भाग 1.1.3 देखें
2. उप-भाग 1.1.3 देखें

अभ्यास-2

(अ) (i) सही (ii) गलत (iii) सही (iv) सही

(ब) (ii)

(स) (iv)

(ड) (i) उत्पादन, रिसेप्शन (ii) जीअर बुरदीय (iii) क्लॉड लेवी- स्ट्रॉस (iv) फर्डोनेंड द सौस्यूर

(च) लघु प्रश्न:

1. उप-भाग 1.1.5 देखें
2. उप-भाग 1.1.6 देखें
3. उप-भाग 1.1.6 एवं 1.2.7 देखें
4. उप-भाग 1.1.6 देखें

(छ) दीर्घ प्रश्न:

1. उप-भाग 1.1.3 देखें

2. उप-भाग 1.1.5 देखें

3. उप-भाग 1.1.6. देखें

अभ्यास-3

(अ) (i) सही (ii) सही (iii) गलत (iv) गलत (v) गलत

(ब) लघु प्रश्नः

1. उप-भाग 1. 2. 2 देखें

2. उप-भाग 1. 2. 3 देखें

अभ्यास-4

(अ) (i) सही (ii) गलत (iii) सही (iv) सही (v) सही

(ब) (i) गंगा और यमुना (ii) 7 (iii) 22 (iv) 18

(स) लघु प्रश्नः

1. उप-भाग 1.2.4 देखें

2. उप-भाग 1.2.4 देखें

अभ्यास- 5

(अ) (i) सही (ii) सही (iii) गलत (iv) सही (v) सही

(ब) लघु प्रश्नः

1. उप-भाग 1.2.5 देखें

(स) दीर्घ प्रश्नः

1. उप-भाग 1.2.3 देखें

2. उप-भाग 1.2.4 देखें

अभ्यास-6

(अ) (i) सही (ii) गलत (iii) सही (iv) सही (v) गलत

(ब) लघु प्रश्नः

1. उप-भाग 1.3.2 एवं 1.3.3 देखें

2. उप-भाग 1.3.7 एवं 1.3.8 देखें

अभ्यास-7

(अ) संक्षिप्त टिप्पणीः

1. उप-भाग 1.4.2 देखें

2. उप-भाग 1.4.4 देखें

3. उप-भाग 1.4.5 देखें